योग तथा
प्राकृतिक चिकित्सा
के प्रयोग
डा. सुखनन्दन जैन

# स्वास्थ्य उपयोगी हिन्दी पुस्तकें

1. योग तथा प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोग 4-00
2. मधुमेह की प्राकृतिक चिकित्सा 0-50
3. प्राकृतिक चिकित्सा प्रश्नोत्तरी 1-00
4. बिना दवा तनदुरुस्ती 2-50
5. स्वास्थ्य एवं सुडोलता 2-00
6. कब्ज एवं गैस 0-50
7. दमा से छुटकारा 0-50
8. भोजन द्वारा चिकित्सा 1-00

रजिस्टरी ... 2-50



...स्थ्य ...डोलता, वजन घटाना,
... बाँझपन, पायोरिया,
... गैस, मधुमेह, ब्लड-
... चिकित्सा सम्बन्धी
... बैठे प्राप्त करें।

...ड, अम्बाला छावनी
...दौर (म० प्र०)

...र आश्रम फिलोर

...राजस्थान)
(पंजाब)

...कोता

# स्वास्थ्य उपयोगी हिन्दी पुस्तकें

| | |
|---|---|
| 1. योग तथा प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोग | 4-00 |
| 2. मधुमेह की प्राकृतिक चिकित्सा | 0-50 |
| 3. प्राकृतिक चिकित्सा प्रश्नोत्तरी | 1-00 |
| 4. विना दवा तनदुरुस्ती | 2-50 |
| 5. स्वास्थ्य एवं सुडोलता | 2-00 |
| 6. कब्ज एवं गैस | 0-50 |
| 7. दमा से छुटकारा | 0-50 |
| 8. भोजन द्वारा चिकित्सा | 1-00 |
| रजिस्टरी डाक खर्च | 2-50 |



...स्थ्य सुडोलता, वजन घटाना,
... बाँझपन, पायोरिया,
... गैस, मधुमेह, ब्लड-
... चिकित्सा सम्बन्धी
... बैठे प्राप्त करे।

...ड, अम्बाला छावनी
...न्दौर (म० प्र०)

...र आश्रम फिलोर

...राजस्थान)
...(पंजाब)

...क्रेता

# प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोग

जल, मिट्टी, धूप ( सूर्यकिरण चिकित्सा ) तथा यौगिक क्रियाओं, उपवास, भोजनसुधार, मालिश आदि की सहायता से, बिना किसी खर्च के, घर बैठे सभी रोगों के इलाज की विधियां


लेखक :

**डा० सुखनन्दन जैन, बी. ए., एन. डी.,**

वैद्य विशारद, एम. एस. सी. ए, (आयुर्वेद बृहस्पति)

जनरल सैक्रेटरी

हरियाणा-पंजाब-जम्मू कश्मीर नेचर क्योर प्रैक्टीशनर एसोसियेशन

महामन्त्री : हरियाणा प्राकृतिक चिकित्सा परिषद


●


प्रकाशक :

**प्रभात प्रकाशन**

सनातन धर्म प्राकृतिक चिकित्सालय

अम्बाला छावनी (हरियाणा)

श्रीमति डा॰ कमला वर्मा
(स्वास्थ्य एवं खाद्य मन्त्री, हरियाणा)

## दो शब्द

प्रकृति हमारी जीवनदायिनी माता है। वह न केवल हमें जीवन देती है, बल्कि यह व्यवस्था भी करती है कि मानव स्वस्थ रहे और पूर्ण आयु प्राप्त करे। किन्तु प्रकृति के नियमों के अनुसार आहार-विहार रखने पर ही यह सम्भव है। जब हम इन नियमों का उल्लंघन करते हैं तो तरह–तरह के रोग हमें घेर लेते हैं। मानव समाज में जो कृत्रिमता एवं बनावटीपन फैलता जा रहा है, उसके कारण रोग भी बढ़ते जा रहे हैं।

प्रकृति माता की शरण में आकर हम पुनः रोग से मुक्त हो सकते हैं तथा उत्तम स्वास्थ्य को प्राप्त कर सकते हैं। भारत के प्राचीन ऋषि आयुर्वेदाचार्यों ने स्वास्थ्य प्राप्ति के लिये प्राकृतिक साधनों यथा सूर्यकिरणों, मिट्टी, पानी (भाप), मालिश, यौगिक क्रियाओं, युक्ताहार उपवास आदि द्वारा चिकित्सा के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। वर्तमान युग में पाश्चात्य-चिकित्सापद्धति की असफलता के फलस्वरूप प्राकृतिक चिकित्सा की ओर पुनः में उन्मुख हुआ है।

जीर्ण और असाध्य रोगी अन्य चिकित्साओं से हताश होकर प्राकृतिक चिकित्सा की शरण में आते हैं तथा स्वस्थ होकर इस पद्धति की सफलता से चमत्कृत रह जाते हैं। यह चिकित्सापद्धति पूर्णतया प्रभावकारी होने के अतिरिक्त किसी भी प्रकार की हानि नहीं करती। साथ ही यह सस्ती, सरल और हर स्थान पर सुलभ है।

डा० सुखनन्दन जैन की यह पुस्तक "योग तथा प्राकृतिक चिकिसा के प्रयोग" का अवलोकन मैंने किया है। यह इस विषय पर एक उपयोगी पुस्तक है, जनसाधारण तथा चिकित्सक समाज इससे लाभ उठायेंगे।

श्रीमति डा० कमला वर्मा
(स्वास्थ्य एवं खाद्य मन्त्री, हरियाणा)

# इसकी आवश्यकता क्यों ?

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान को जन साधारण तक पहुंचाना आसान नहीं। आज गरीब लोग धर्मार्थ औषधालयों में धक्के खाकर तंग आ चुके हैं। दवाई के खर्च ने मध्यम वर्ग के लोगों की कमर तोड़ डाली है। अमीर लोग विषैली और नशीली औषधियों के सेवन से असाध्य रोगों में फंस कर अकाल मृत्यु के शिकार हो रहे हैं। ऐसी हालत में प्राकृतिक चिकित्सा ही अमीर-गरीब सभी के लिये मददगार है। प्राकृतिक चिकित्सा के लिए अधिकतर ऐसे रोगी ही आते हैं, जो सभी चिकित्साओं से निराश हुये होते हैं और उनका रोग असाध्य तथा पुराना हो जाता है। उनके सामने मुख्य समस्या होती है समय का अभाव। हमारे पास अनेक रोगियों के पत्र आते रहते हैं जिसमें ऐसे ही प्रश्नों की भरमार होती है कि कटिस्नान अथवा मेहन स्नान, एनिमा किस तरह लिया जाये। इस लिए प्रस्तुत पुस्तक में प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोग में आने वाली सभी तरह की विधियों का वर्णन किया गया है कि साधारण पढ़ा लिखा आदमी भी इसको पढ़कर लाभ उठा सके तथा असाध्य रोगी जिसके पास किसी चिकित्सालय में रहने के लिए समय का अभाव है वह किसी चिकित्सालय में एक दो सप्ताह रहकर उपचार का अनुभव एवं ज्ञान प्राप्त कर के अपने घर पर भी स्वास्थ्यलाभ प्राप्त कर सकते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा करने से पहले विभिन्न प्रयोगों की विधियों के सम्बन्ध में ज्ञान रखना आवश्यक है। वास्तव में प्राकृतिक चिकित्सा की सफलता उसके अचूक प्रयोगों पर ही निर्भर है। हमें आशा एवं विश्वास है कि हमारे प्रेमी पाठक, एवं हितैषी अपने मित्रों को अधिक से अधिक लाभान्वित करके हमारे श्रम की सार्थकता सिद्ध करेंगे। —लेखक

# विषय सूची

प्रकाशक :

**डा० सुखनन्दन जैन**

बी. ए, एन. डी.

इन्चार्ज : सनातन धर्म प्राकृतिक चिकित्सालय

अम्बाला छावनी 133 001
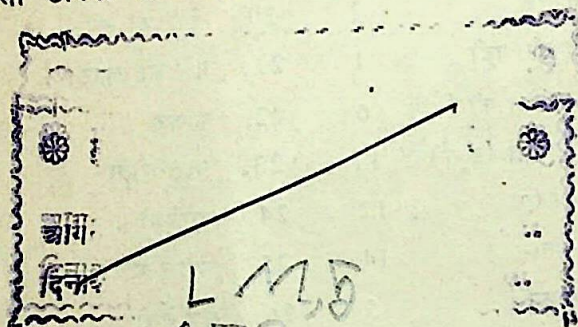
मूल्य : 4-00



मुद्रक :

बनारसी दास इलैक्ट्रिक प्रैस

अम्बाला छावनी।

## गरम सेक (*Fomentation*)

शरीर के किसी भी स्थान पर गर्मी पहुंचाने की क्रिया को सेक कहते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रचलित व्यवस्था है। गर्म पानी में भिगोये हुये कपड़े से या गरम पानी की भरी बोतलों (Hot Water Bag) के द्वारा पेट या शरीर की त्वचा में उष्णता लायी जाती है। सेक देते समय चमड़ी पर प्रत्यक्ष सेंक न देकर जिस स्थान पर सेक देना हो उस स्थान पर एक सूती या फलालेन रखकर सेक देना चाहिये। तेज दर्द को जल्दी दूर करने के लिए सेक बहुत लाभदायक है। यह सब तरह के लेप और मरहमों से कहीं अधिक लाभदायक है। यह 5-10 मिन्ट तक दिया जा सकता है।

## मिट्टी की पट्टी

स्वास्थ्य के लिये मिट्टी का बहुत महत्त्व है। जैसा कि हम जानते हैं कि हमारा शरीर पंच तत्त्वों का बना है और इन पंच तत्त्वों के परिणाम और क्रम में गड़बड़ी उत्पन्न होने से रोग होता है। इसी लिये प्राकृतिक चिकित्सा को बहुत से लोग तत्व चिकित्सा के नाम से पुकारते हैं। मिट्टी का प्रयोग करके शरीर के ऊपर कई प्रकार के लाभ होते हैं इस से शरीर में जमा पुराने विकार उखड़कर बाहर खींच लेते हैं, सूजन, दर्द, जलन आदि अनेक शिकायतों में इस से बहुत लाभ पहुंचता है। इसका प्रयोग पट्टी के रुप
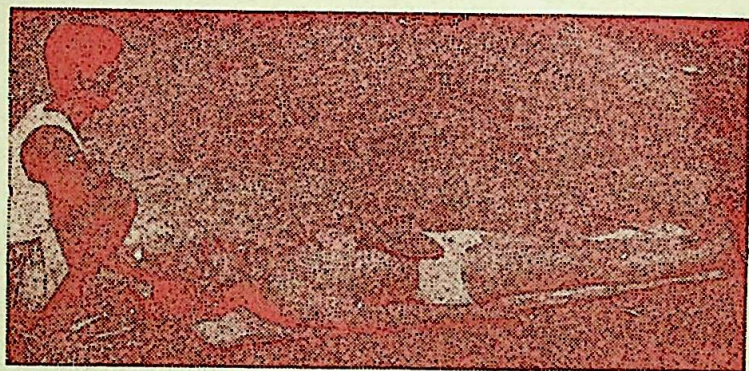
सिर तथा पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी

में ही अधिक किया जाता है। मिट्टी का साफ सुथरा होना बहुत आवश्यक है। इसमें कुछ बालू का अंश भी होना चाहिये।

मिट्टी की पट्टी बनाने के लिये जमीन से दो-तीन फुट नीचे की साफ मिट्टी लेनी चाहिये। इसमें खाद, गोबर तथा अन्य प्रकार की गंदगी न मिली हो। यदि मिट्टी में कंकड़ पत्थर हो तो कूट पीस कर किसी छलनी में छानकर उसमें ताजा पानी मिलाकर लकड़ी की सहायता से गूंधे आटे की तरह बना लेना चाहिये। मिट्टी इतनी अधिक गीली न हो कि स्थान पर रखने से पहले बहने लगे।

अब एक 10-12 इंच लम्बा तथा 6-7 इंच चौड़ा कपड़ा लेकर उस पर एक सेर मिट्टी आधे इंच की मोटाई में फैलानी चाहिये और उसे उठाकर मिट्टी की तरफ से पेड़ू पर या जहाँ लगाना हो उस स्थान पर रख देनी चाहिये कि कपड़ा ऊपर रहे और मिट्टी त्वचा को छूती

रहे। रोगी इस अवस्था में इच्छानुसार विना कुछ ओढ़े वा कम्वल ओढ़कर लेटा रह सकता है।

पेट पर मिट्टी 20 मिन्ट से आधे घण्टे तक रखी जा सकती है। मिट्टी के हटाने के वाद मिट्टी लगे स्थान को किसी गीले कपड़े से साफ कर देना चाहिये और उस स्थान को हथेली से धीरे धीरे रगड़कर गरम कर लेना चाहिये।

मिट्टी की पट्टी ठण्डे पानी की तरह चमड़ी को सुकोड़ती है और वहां के रक्त कोषों को शुद्ध कर देती है। सूजन-दर्द दूर करने तथा घाव भरने के लिए मिट्टी का प्रयोग लाभकारी होता है। पेडू पर प्रातः मिट्टी की पट्टी रखने से मल-मूत्र साफ आता हैं। वुखार में लाभ करती है।

जिन व्यक्तियों को कब्ज की पुरानी शिकायत हो और शौच में अधिक कठिनाई होती हो, उनको पट्टी लगाने के वाद एनिमा लेना चाहिये जिस से पेट खूव साफ होता है। कई बार मिट्टी की पट्टी लगाने से सूजन आ जाती है और दर्द बढ़ जाता है। इससे घवराना नहीं चाहिये। यह एक अच्छा लक्षण है क्योंकि इस से मालूम होता है कि मिट्टी ने ठीक असर किया और वह विकार को उसके स्थान से हटाकर शीघ्र निकाल रही है। ऐसी अवस्था में पीड़ा की जगह थोडी देर लोकल स्टीम (भाप) लगाने से विकार पसीने के रूप में वाहर निकल कर शीघ्र आराम मिलता है। गठिया के दर्द में इस प्रकार मिट्टी और भाप के प्रयोग से वहुत लाभ होता हैं। फोड़ों के लिये मिट्टी विशेष रूप से लाभदायक होती हैं। दिन में दो तीन वार पट्टी लगाते रहने से फोड़ा फूटकर तकलीफ मिट जाती है या फोड़ा वहीं वैठ जाता है। अगर फोड़ा ज्यादा कड़ा हो तो उस पर मिट्टी और भाप दोनों का

प्रयोग करना चाहिये। सभी तरह के घाव मिट्टी द्वारा ठीक हो जाते हैं। कुछ लोग कटे घाव पर मिट्टी लगाने से डरते हैं कि गन्दा होकर वह वढ़ न जावे, परन्तु शुद्ध मिट्टी के प्रयोग से कभी घाव में हानि नहीं पहुंचती।

मिट्टी के कई आश्चर्यजनक प्रयोग हैं। जर्मन के चिकित्सक एडोल्फ जस्ट के पास एक ऐसा सांप का काटा हुआ व्यक्ति लाया गया जो प्राय: मरणासन्न था और कई तरह के इलाज के वाद भी ठीक नहीं हुआ था। डांक्टर जस्ट ने एक लम्वा गड्डा खुदवाया और उसमें गीली मिट्टी बिछवा कर उस व्यक्ति को उसमें लिटा दिया और उसके ऊपर गीली मिट्टी अच्छी तरह रखवा दी जिससे उसका पूरा शरीर ढक गया। केवल चेहरा वाहर रहा। उसे चौवीस घण्टे इसीं हालत में रखा गया। इसके वाद वह स्वयं होश में आ गया। कहते हैं कि सांप का काटा हुआ आदमीं मरता नहीं सिर्फ सांप के जहर की गरमी के कारण रोगी वेहोश हो जाता है और शरीर के क्रिया विज्ञान में रुकावट कुछ समय के लिये आ जाती है और लोग समझते हैं कि रोगी जिसे सांप ने काटा था मर गया। इसी लिये कहते हैं कि साँप के काटे हुये आदमी के शरीर को जलाते नहीं हैं। वहुत से ऐसे केस देखने में आये हैं कि सांप के काटे व्यक्ति को गंगा में वहा दिया गया और पानी की ठंडक से वह रोगी जी उठा।

महात्मा गाँधी ने लिखा है कि मिट्टी में इतनी शक्ति है कि उसे देखकर चकित रह जाना पड़ता है। एक वार महात्मा गाँधी से एक अंग्रेज लुई फिशर नाम के व्यक्ति ने मिलने के समय मांगा और वह उनसे मिलने अहमदावाद सागरमति आश्रम में गया। महात्मा जी अपने खाली समय में मिट्टी की पट्टी का प्रयोग करते थे और वह मिट्टी की

पट्टी पेट पर तथा सिर पर रखकर लेटे थे। लुई फिसर नाम का अंग्रेज जो गांधी जी के बारे में बहुत कुछ पढ़ता था, उसके मन में कल्पना थी कि महात्मा गांधी ने बेरिस्टरी की पढ़ाई विदेश में जाकर की है और वह इस समय देश के सब से बड़े नेता हैं:, उनके पास बहुत बड़ी कोठी तथा सुन्दर कार होगी। पर उसे साबरमति आश्रम में ऐसा कुछ नजर नहीं आया। महात्मा गांधी को उसने साधारण सा व्यक्ति समझकर पूछा कि महात्मा गाँधो कहां मिलेगें। महात्मा जी बोले कि मुझे ही महात्मा गांधी कहते हैं। उसने कहा मुझे तो आप से बहुत सी बातें पूछनी थीं। महात्मा जी ने कहा पूछीये शायद मैं आपको सन्तुष्ट कर सकूं। उसने पहला सवाल यह किया कि आप यह बतायें कि अपने शरीर पर कीचड़ क्यों लपेट रखी है। गांधी जी ने बहुत प्यार से उत्तर दिया कि हमारे देश के ऋषि मुनि अपने मस्तिष्क में ठंडक पहुंचाने के लिये मस्तिष्क पर चन्दन लगाते हैं, चूंकि मुझे मानसिक श्रम अधिक करना पड़ता है इस मस्तिष्क को ठंडक के लिये सिर पर मिट्टी तथा पेट को ठीक रखने के लिये पेट पर मिट्टी लगाता हूं। यह मिट्टी हमारे देश की है। इसमें हमारा कोई खर्च नहीं होता और हमारा पैसा दवाइयों के लिये बाहर जाने से बचता है। इस पर वह अंग्रेज गांधी जी के इस प्रयोग से बहुत प्रभावित हुआ।

## सावधानियां :—

1. मिट्टीं न अधिक चिकनी हो न अधिक रेतेली हो। मिट्टी में खाद वगैरा बिलकुल नहीं होना चाहिये।

2. शरीर पर एक बार प्रयोग की गयी मिट्टी को पुनः प्रयोग नहीं करना चाहिये। यदि मिट्टी का अभाव हो उसे 15-20 दिन धूप में सुखाने के बाद उपयोग की जा सकती है।

3. मिट्टी की पट्टी का प्रयोग हमेशा खाली पेट करना चाहिये।

# एनिमा

एनिमा यौगिक क्रिया वस्ती का सरल रूप है। प्राचीन समय में ऋषि-मुनि अपने शरीर को शुद्ध रखने के लिये तथा मन की एकाग्रता लाने के लिए इसका प्रयोग करते थे। आयुर्वेद के प्रधान ग्रन्थ चरक और सुश्रुत में वस्ती का उल्लेख विस्तार से मिलता है। इसके समुचित प्रयोग से लाभ की वजाय कभी हानि नहीं हो सकती।
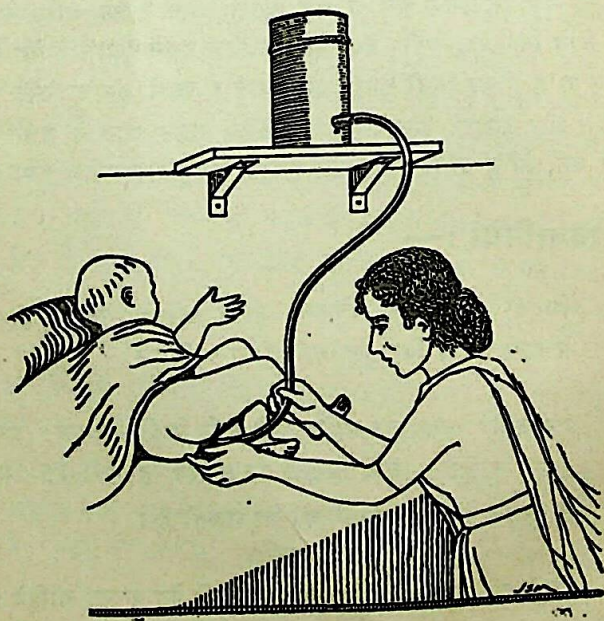
प्राकृतिक चिकित्सा में एनिमा के प्रयोग की प्रायः सलाह दी जाती है। एनिमा द्वारा आँतो में पानी चढ़ाया जाता है ताकि वह साफ हो कर शरीर को मल से मुक्त कर दे। एनिमा उस यन्त्र को कहते हैं जिससे पानी चढ़ाया जा सके। यह किसी भी कैमिस्ट के हां पर आसानी से मिल जाता है। यह एक ताम चीनी का डिब्बा होता है और इसके नीचे एक नली निकली होती है जिसमें रवड़ की लम्वी नली लगी होती है। इसके दूसरे सिरे पर नोजल के सहारे केथेटर लगाया जाता है, जिसे गुदा द्वार में प्रवेश कराकर आंतों में पानी चढ़ाया जाता है। एनिमा लेने के लिये किसी तख्ते पर लेट कर और पेताने को सिराने से चार-पाँच इंच ऊपर उठाकर लेना चाहिये। जमीन पर लेट कर भी एनिमा लिया जा सकता है।
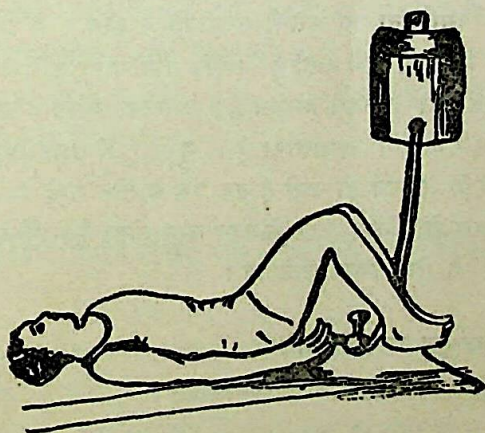
एनिमा दायें-बायें करवट लेटकर भी लिया जा सकता है। एनिमा पात्र एनिमा लेने के स्थान से 4–5 फुट ऊपर एक–डेढ़ सेर पानी भर कर टांग देना चाहिये। एनिमा लेने से पहले नोजल को खोलकर थोड़ा पानी

बाहर निकाल देना चाहिये ताकि नली के अन्दर की हवा निकल जावे। गुदा में डालने वाले नोजल को या केथेटर को चिकनाई (घी, वेसलीन या तेल) चुपड़ लेना चाहिये ताकि वह गुदा द्वार में आसानी से भीतर जा सके। भीतर जाते ही टोटी खोलकर मल द्वार में पानी अन्दर जाने दें। पैरों को सीधा न रखकर जरा उकड़ू खींच लेने में सुविधा होती है। जितना पानी जा सके, जाने के बाद, धीरे-धीरे दायें बायें करवट लेकर शौच जाना चाहिये। शौच जाने के बाद पानी और मल अपने आप निकलने देना चाहिये। उसे निकालने के लिये जोर न लगायें। जोर लगाने से पानी उपर की ओर चढ़ता है और सफाई अच्छी नहीं होती है।

पेट में वायु (गैस) बने तो एनिमा लेते समय पानी में कागजी नीवू डाल सकते हैं तथा चर्म रोगों में नीम की पत्ती उबालकर उसके पानी का एनिमा लेना एवं पुरानी कब्जीयत में बीच २ में ठण्डे पानी का एनिमा लेने से बहुत लाभ होता है क्योंकि ठंडा पानी बड़ी आंतों की ओर उसकी झिल्ली को मजबूत बनाता है। पोस्टेड ग्लैन्ड के दर्द में गरम पानी का एनिमा ही लाभकारी है। गुरदे ( Kidneys ) जब मूत्र निर्माण कार्य में असमर्थ हो जाते है तब एक से तीन घण्टे के भीतर बार-बार गरम जल से एनिमा करने से बहुत लाभ होता है। एनिमा का प्रयोग निम्न कार्यों के लिये किया जाता है।

1. कब्ज दूर करने के लिये।
2. आंतों को अधिक सक्रिय बनाने हेतु।
3. उदर वायु (गेस) से छुटकारा पाने के लिये।
4. आंतों के कीड़े से मुक्ति पाने के लिये।
5. बवासीर (अर्स) भगन्दर से मुक्ति पाने के लिये।
6. आंतों की सूजन दूर करने के लिये।

7. श्लेसमिक झिल्लियों को कष्ट रहित करने के लिये तथा कोलाईटिस को दूर करने के लिये।

8. आँतों को पुष्ट करने के लिये।

9. अतिसार-नियंत्रण के लिये तथा आंतों की सफाई के लिये।

उपवास, फलाहार तथा ज्वर, जुकाम, आदि तीव्र रोगों में एनिमा वड़ा ही लाभकारी सिद्ध होता है और तत्काल लाभ देता है।

परन्तु कुछ लोग समझते हैं कि रोग की अवस्था में लम्बे समय तक एनिमा लेते रहने से आंतों को मल फेंकने की शक्ति नष्ट हो जाती है। परन्तु अनुभव यह बताता है कि जब तक आंतों में मल फेंकने की शक्ति नही एवं उसकी वजह से भूख नहीं लगती या कम लगती है; अथवा वेचैनी घबड़ाहट आदि अनेक तकलीफें होती हैं तब आंतों के कार्य में मदद पहुंचाने की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से एनिमा बहुत आवश्यक होता है।

# शक्तिदायक अहिंसक एनिमा

साधारण तथा 250 ग्राम ठण्डा पानी आंतों में पहुंचाकर 10-20 मिनट रोकने के वाद शौच जाना चाहिये। अगर अधिक दिनों तक एनिमा लेने की आवश्यकता हो तो इसी तरह का एनिमा लेना चाहिये। पानी की ठण्डक आंतों को सजग कर देगी, उन्हें बल देगी और अपना कार्य धीरे-धीरे करने लगेगी।

शक्तिदायक एनिमा हर रोज, तथा दिन में दो बार भी लिया

जा सकता है। यह एनिमा नित्य महीनों लेने से भी लाभ के सिवाय इसमें किसी प्रकार की हानि की कोई सम्भावना नहीं है। इस एनिमा से कब्ज, गर्मी, सुजाक, भयंकर ज्वर, आंतो के रोग आदि में बड़ा लाभ पहुंचता है। इस एनिमा को संस्कृत में रक्य-प्रक्षालिका-वस्ति और अंग्रेजी में टोनिक एनिमा कहते हैं।

कुछ लोग सोचते हैं कि एनिमा लेने से कमजोरी आ जावेगी। एनिमा लेने से शरीर के रक्त का कोई भी भाग नहीं निकलता, शरीर में जिस मल का निकल जाना आवश्यक होता है,एनिमा का पानी उसे लेकर बाहर निकलता है। इस एनिमा से किसी प्रकार की कमजोरी नहीं आती तथापि पेट अत्यन्त खराब हो तो एनिमा का पानी उनकी बड़ी आंत में जमा मल को गला देता है। मल और उसका कोई अशो में देह शोषित होता हैं, इस लिये एनिमा में उन्हें एक प्रकार की दुर्बलता-सी मालूम होती है। जिन्हें इस प्रकार की दुर्बलता मालूम होती हो उन्हें विशेष रूप से वार-वार एनिमा लेना चाहिये। वार-वार एनिमा लेने से उनका पेट पूर्ण रूप से साफ हो जावेगा तब उन्हें एनिमा लेने से कमजोरी महसूस नहीं होगी। वास्तव में जो एनिमा का अर्थ लोग डाक्टरी एनिमा अर्थात साबुन के पानी लगाते हैं (यह ऐलोपेथी चिकित्सा में उपयोग किया जाता है) जिससे आंतों की वास्तविक चिकनाई समाप्त हो जाती है, जिसका अधिक उपयोग से नुसकान हो सकता है। परन्तु प्राकृतिक चिकित्सा में एनिमा में सादा पानीं का ही उपयोग किया जाता हैं। जिससे आंतो के लिये किसी प्रकार का नुकसान होने का खतरा नहीं है। जिस प्रकार मुंह के अन्दर पानी लेकर कुल्ला करते हैं जिससे किसी प्रकार का नुकसान नहीं होता है उसी प्रकार से पानी लेने पर आंतों को साफ करना स्वाभाविक है।

## सावधानियाँ:—

1. एनिमा लेने के बाद 10-15 मिनट दायें-बायें करवट लेटकर पानी रोकना चाहिये ताकि पुराना मल घुलने में आसानी रहे।
2. कुछ खाने के एक दम बाद एनिमा नहीं लेना चाहिये। कम से कम दो तीन घण्टे के बाद लिया जा सकता है।
3. एनिमा लेने के तुरन्त बाद कुछ नहीं खाना चाहिये।
4. एनिमा का पानी शरीर के तापमान के बराबर गरम होना चाहिये। अधिक समय तक एनिमा लेने कीआवश्यकता हो तो साधारण ताजे पानी का एनिमा लेना चाहिये।
5. एनिमा लेने से पहले एक गिलास पानी पीना लाभदायक है।
6. यदि एनिमा लेते ही जोर के पाखाने की हाजत मालूम हो तो पाखाना हो आने के बाद आवश्यकतानुसार पुनः एनिमा लिया जा सकता है।

## योनी बस्ति (डूस)

एनिमा यन्त्र के साथ योनी वस्ती नली भी साथ होती है जिसके द्वारा ठण्डा पानी या नीम की पत्तियों का उबला पानी योनी में चढ़ाकर उसे धोया जाता है। इसको लेने के लिये पीठ के बल लेटकर दोनों पैरों को घुटनों से मोड़कर इस तरह स्थिर रखना चाहिये कि गर्भाशय पर भार न पड़े। इस क्रिया से स्त्रियों की योनी की ताकत बढ़ती है, तथा गर्भाशय की स्थिति सुधरती है। गर्भाशय के अन्दर छाले, घाव, तथा जलन हो तो नीम की पत्ती के ठंडे पानी की योनी वस्ती लेनी चाहिये। जलन न होने पर साधारण गुनगुने पानी का प्रयोग किया जा सकता है। योनी सम्बन्धी समस्त बीमारियों में इसका प्रयोग लाभकारी है।

# कटि स्नान (*Hip Bath*)

तकियादार टब या बड़ी नाद में ठण्डा पानी भरना चाहिये कि उसमें बैठने पर पानी नाभि तक आ जावे। पैर टब के बाहर एक छोटी चोकी पर रखें। रोगी की पीठ टब के पिछले भाग से लगी रहे। टब में बैठने के बाद किसी खुरदरे तौलिए से पेडू को दाईं ओर से बांयी ओर धीरे-धीरे मलते रहिये। दबाव ज्यादा नहीं डालना चाहिये अन्यथा पेडू की त्वचा छिल जायेगी। यह स्नान 10 से 20 मिनट तक किया जा सकता है। जो दुबले व्यक्ति हैं वे अधिक से अधिक 10 मिनट लें और जो मोटे हैं वे यह स्नान 25 मिनट तक ले सकते हैं। जाड़े के दिनों में इस स्नान का समय तीन चौथाई या इससे भी कम कर देना चाहिये। यह
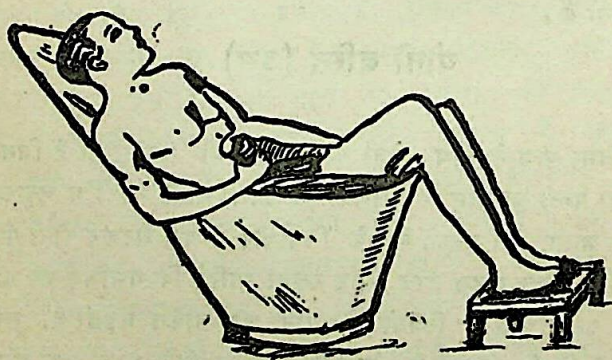
थोड़े समय से प्रारम्भ करना चाहिये। हर रोज एक एक मिनट बढ़ाकर आवश्यकतानुसार समय तक पहुंचाना चाहिये। यदि ठण्डक अधिक हो तो

यह स्नान आरम्भ करने से पहले सारे शरीर को हाथ से पांच–सात मिनट तक रगड़कर टब में बैठना चाहिये। शरीर गर्म हो जायेगा और ठंडक कम प्रतीत होगी।

कटिस्नान के बाद जो स्थान पानी से भीग गया हो उसे सूखे कपड़े से पोंछकर और फुर्ती से कपड़े पहनकर टहलने निकल जाना चाहिये या कोई हल्की कसरत करनी चाहिये। जो टहल न सकें, न कोई कसरत कर सकें उन्हें कम्बल ओढ़ कर आध घण्टे लेटना चाहिये ताकि कटिस्नान में आयी ठण्डक चली जायें और शरीर गरम हो जाये। पूर्ण स्नान कटिस्नान के एक दो घण्टे बाद ही करना चाहिये।

पेट के सभी विकारों को स्थायी रूप में लाभ पहुंचाता है। कटिस्नान से पेट शुद्धि का प्रधान कारण यह है कि इससे यकृत (Liver क्लोम Pancreas) और अंतड़ियो के रसस्रव में वृद्धि होती है। इन रसों के पर्याप्त मात्रा में निकलने से कोष्ठबद्रता (कब्ज) नहीं रह सकती।

कटिस्नान जिस प्रकार विभिन्न पाचक रसों के निकलने में सहायता करता है, उसी प्रकार यह आँतों की रस शोषण क्षमता को कई गुणा बढ़ा देता है। इसलिये इससे केवल पेट साफ होता है, ऐसी बात नहीं। जिसे अजीर्ण रोग हो उसका अजीर्ण रोग इससे अच्छा हो जाता है तथा पाचन शक्ति वढ़ जाती है। दूसरे शब्दों में ऐसा कोई रोग नहीं है, जिसे कटिस्नान से फायदा न पहुंचता हो। चरक का मत है कि पेट साफ रहने से जठाग्निी तेज होती है, शरीर की स्वाभाविक क्रिया चलती है, इन्द्रियां मन और बुद्धि प्रशन्य रहती है एवं बल तथा सामर्थ बढ़ता है।

# मेहन स्नान (सिज बाथ)

कटिस्नान के टब में ही यह स्नान लिया जाता है। टब में एक चोकी या तख्ता रखना चाहिये जो सामने की ओर से अर्ध चन्द्राकार कटि हुई हो ताकि उस पर बैठ कर इन्द्रीय पर पानी डालते समय अन्य किसी अंग पर पानी न स्पर्श हो। टब में इतना पानी होना चाहिये कि पानी चौकी पर आधा इंच रहे। पानी ठण्डा होना चाहिये।
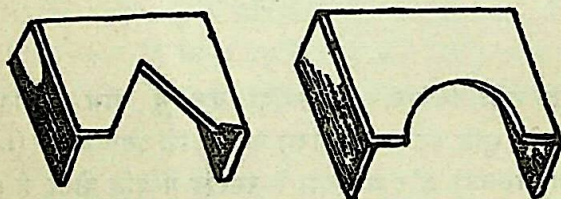
पानी भर लेने के बाद चौकी पर खुले बदन बैठना चाहिये। शिशन (लिंग) के ऊपर की चमड़ी आगे खींचने हुये शिशन मुंड को पूरी तरह ढककर बायें की दो उंगलियों से पकड़े रखना चाहिये और दाहिने हाथ से छोटा मुलायम कपड़ा सामने रखे शीतल जल से भिगोकर उंगलियों से पकड़ी हुई चमड़ी के अग्रभाग पर स्पर्श करते जायें।

जिन भाईयों के शिशन के ऊपर चमड़ी छोटी हो अथवा जिन मुसलमान भाईयों का खतना हुआ हो (ऊपर की चमड़ी कटि हो) उनको गुदा द्वार तथा अंडकोष के बीच में, जो सीवन है, उसे उपरोक्त विधि से कपड़े द्वारा पानी का स्पर्श करना चाहिये। यह क्रिया 10 मिनट से लेकर 15 मिनट तक की जा सकती है। जो दुबले व्यक्ति हैं उनके लिये 10

मिनट का समय काफी है। जो मोटे हैं वह यह क्रिया 20 मिनट तक कर सकते हैं। यह क्रिया समाप्त होने के बाद रीढ़ या पीठ के बीच के भाग को 2 या 3 मिनट तक गर्दन से नीचे तक किसी गीले तौलिये से रगड़ना चाहिये।

स्त्रियों को मेहन स्नान के लिये दोनों तरफ से जननेंद्रियों के ओष्ठों को धीरे-धीरे धोना चाहिये। इस स्थान को ठण्डा पानी से स्पर्श करने से सारे शरीर व मस्तिक में ठंडक पहुंचती है। इस स्नान के बाद कटिस्नान की तरह गरम करने के लिये टहलना, कसरत करना या कम्बल औढ़कर आधा घण्टा लेटना चाहिये। यदि टब न मिले तो यह स्नान स्टूल पर भी लिया जा सकता है। स्टूल पर गीला तौलिया रखकर बैठना चाहिये और स्टूल के किनारे से लगकर पानी से भरी बाल्टी सामने रखकर मेहन स्नान लिया जा सकता है।

वीर्य स्खलन, प्रदर (लिकोरिया) स्नायु दुर्बलता, आदि से छुटकारा मिल सकता है। क्रोधी स्वभाव के मनुष्य, आसानी से मानसिक-कष्ट के शिकार होने वाले व्यक्ति एवं चंचल व्यक्ति यदि कुछ दिनों तक मेहन स्नान कर ले तो उसका स्वभाव धीरे-धीरे शांत हो जाता है। स्नायुशूल और साइटिका रोग में बहुत लाभ पहुंचता है। स्त्रियों के हिस्टीरिया रोग में बहुत लाभ पहुंचता है। प्रायः स्त्रियों के सभी रोगों के लिये सर्वाधिक लाभ पहुंचाता है।

# रीढ़स्नान (*Spinal Bath*)

रीढ़ स्नान के लिये एक विशेष प्रकार का टब होता है। उसमें पानी भरकर सिर्फ रीढ़ की हड्डी तथा उसके आस पास पानी का स्पर्श होता है।
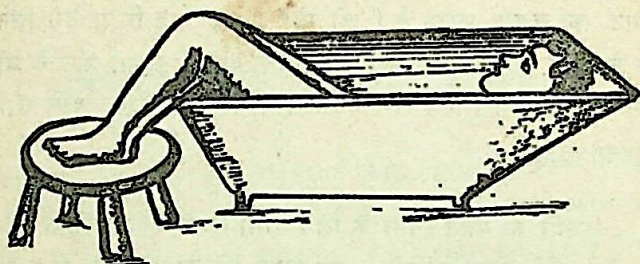
सुष्मना-नाड़ी स्मूह रीड़ की कोशिकाओं के भीतर सुरक्षित रहती है। इस स्नान से रक्त संचालन वढ़कर स्नायुओं की चेतना तथा बल प्रदान करता है।

निम्न रक्त चाप, अनिद्रा, वेहोशी, थकावट, दुर्बलता एवं स्नायुविक तनाव आदि रोगों में यह लाभ करता है। आरम्भ में 10 मिनट तक रीड़ स्नान के बाद रीड़ की हड्डी को तौलिये से रगड़ना चाहिए और शरीर को गर्म कर लेना चाहिये।

## पैरों का गरम स्नान (*Hot Foot Bath*)

पैरों के गरम स्नान के लिये एक बाल्टी में इतना गरम पानी लेना चाहिये जितना व्यक्ति सह सके और किसी स्टूल या कुर्सी पर वैठकर पैरों को गरम पानी भरी बाल्टीं में रखना चाहिये। बाल्टी में पानी इतना हो कि घुटमों के नीचे तक आ जाये। पानी ज्यों–ज्यों ठण्डा होता जाए बाल्टी में से थोड़ा पानी निकाल कर उतना ही तेज गरप पानी मिला देना चाहिये। स्टूल पर बैठकर एक कम्बल इस तरह ओढ़ना चाहिये कि सिर को छोड़कर सारा शरीर ढका रहे और बाल्टी भी कम्बल के अन्दर आ जाय। इस स्नान के आरम्भ में थोड़ा गरम पानी

पीना चाहिये और बीच बीच में थोड़ा गरम पानी पीते रहना चाहिये और सिर पर ठण्डे पानी का भीगा तौलिया रखना चाहिये।

पैरों का गरम स्नान दस से बीस मिन्ट तक लेना चाहिये और स्नान खत्म होने पर सूखे तौलिये से पोंछ लेना चाहिये यदि पसीना आ जाए तो सारे शरीर को गीले तौलिये से पोंछ लेना चाहिये। यदि आवश्यक हो तो ठण्डे पानी से साधारण स्नान भी किया जा सकता है। सर्दी—जुकाम, अनिद्रा, रक्तचाप (ब्लडप्रेशर) बेहोशी एवं दमा के दौरे में यह बहुत लाभ पहुंचाता है। वाष्प स्नान की तरह गरम पादस्नान से भी रोमकूप खुल जाते हैं और शरीर से पसीने द्वारा बहुत सा दुषित तथा विजातीय पदार्थ बाहर निकल जाता है। इसके इलावा इस स्नान से आंतें मूत्राशय और पेड़ू के अन्य यन्त्रों के भीतर खून का दौरा होता हैं और इससे ये यन्त्र सफलता प्राप्त करते हैं।
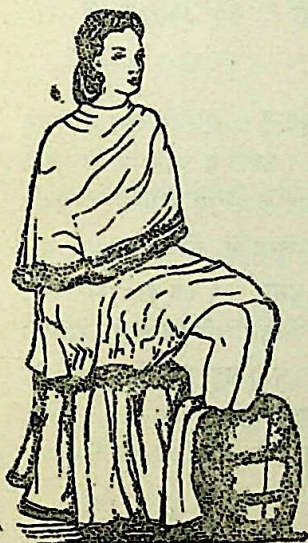
जिन स्त्रियों की बीच बीच में मासिक बन्द हो जाती है, वे यदि कुछ अधिक समय तक यह स्नान लें तो बहुत लाभ होता है।

# सूर्य किरण चिकित्सा

हमारे पूर्वज हज़ारों वर्ष पहले से ही जानते थे कि सूर्य की किरणों में रोगों को नष्ट करने की अदभुत क्षमता है। भयंकर से भयंकर रोग सूर्य किरणों की सहायता से ठीक हो जाते हैं तो फिर जान लेने वाला क्षय (टी. बी.) जैसा रोग ठीक क्यों न हो? सूर्य किरणों में रोग नाशक विशिष्ट क्षमता है।

सूर्य को यूनानी भाषा में हेलियो कहते हैं। सूर्य किरणो से चलने वाली चिकित्सा आज विश्व पर छा रही है। उससे न जाने कितने रोगी स्वस्थ हो रहे हैं। सूर्य किरणों से अनेक प्रकार के प्रयोग रोगियों पर किये गये। 1930 में डाक्टर रोलियर स्विटजर लेन्ड में सोलेरियम सूर्य गृह खोलकर विश्व को चमत्कृत कर दिया। हुआ यह कि डा० रोलियर, यूरोप के प्रसिद्ध डाक्टर कोचर के साथ क्षय रोगियों की चिकित्सा रोगियों की हड्डियों को रगड़कर आपरेशन द्वारा करते थे। पर कुछ दिन में रोगी ठीक हो जाता था और बाद में फिर रोग पनप उठता था। दो तीन आपरेशनों से लेकर बीस बीस तक आपरेशन होते, पर फिर भी रोगी को मौत के घाट उतरना पड़ता था।

रोगियों की भंयकर पीड़ा और वेदना को देखकर रोलियर व्यथित हो सोचने लगे। सोचते सोचते उनकी समझ में आया कि इस रोग के कारणों में मूल कारण है सूर्य प्रकाश का अभाव। मनुष्य अपने शरीर पर दुनिया भर के कपड़े लादकर अपने आप को सूर्य किरणों से वंचित रखता है, और उसी से उसका रोग पनपता है। तभी से अंग्रेजी में एक कहावत भी चल पड़ी है (Where the sun does not enter doctor must) जहां सूर्य का प्रवेश नहीं मिलेगा, वहां डाक्टर को प्रवेश मिलेगा।

भगवान भास्कर ही प्रकृति के कण कण में सौन्दर्य बिखेरते हैं। खुले मैदान में खेलने किलकिलाने वाले पशु–पक्षियों को देखिये, चाहे स्त्री–पुरुषों, बालकों बालिकाओं को देखिये-उनके कूदने फादने में उनके हंसने खिलखिलाने में उसी जादूगर का जादू भरा है। सूर्य की किरणों में मानव शरीर पर निम्न आश्चर्यकारी प्रभाव दिखाई देता है।

1 रक्त में फास्फोरस की वृद्धि होती है।

2 रक्त में आयोडीन की वृद्धि करती है।

3 रक्त में कैलसियम की वृद्धि करती है।

4 रक्त में हेमोग्लोवीत की वृद्धि करती है।

5 रक्त में लाल कणों की वृद्धि होती है।

6 मेटाबालिज़्म की वृद्धि होती है।

7 रक्त में शकर की मात्रा कम करती है। कभी कभी मधुमेह के रोगी की शर्करा एक दम ठीक हो जाती है।

8 आदमी की बौद्धिक क्षमता बढ़ती है।

9. यूरिया क्रोटीन तथा नाइट्रेट्स के शरीर में निकलने की क्रिया में वृद्धि करती है।

10 तेल मालिश करने के बाद धूप में बैठने से शरीर में विटामिन डी. उत्पन्न होता है।

सूर्य की किरणों का रंग प्रायः श्वेत ही दिखाई देता है। परन्तु यदि हम सूर्य प्रकाश पुन्ज को हम त्रिपार्श्व शीशे (Prism) में गुजारें तो प्रकाश सात रंगों में विभाजित दिखाई देगा।

1 लाल (Red)

2 आसमानी (Blue)

3 बेंगनी (Violet)

4 पीला (Yellow)

5 हरा (Green)

6 नीला (Deep Blue)

7 नारंगी (Orange)

इन सात रंगों में मुख्य रंग लाल, पीला और नीला ही है। यह प्राथमिक रंग कहलाते हैं। शेष रंग इन्हीं रंगों के परस्पर मिश्रण से वनते हैं। इस चिकित्सा में प्रत्येक रंग का अपना अपना महत्व है।

## हलका नीला (Light Blue)

नीला रंग सव रंगों में श्रेष्ठ माना जाता है। प्राणी मात्र का नैसर्गिक जीवन इस रंग पर निर्भर है। समस्त पृथ्वी पर फैले हुये आकाश का रंग नीला है। इस नीले रंग से हमें जीवन शक्ति प्राप्त होती है, नीला रंग ठंडक तथा शान्ति देने वाला है। जब शरीर का कोई अंग या या सभी अंग गरम हों तो इसका उपयोग करना चाहिये। हलके नीले रंग की शीशी का तप्त जल बुखार, पुरानी पेचिश, अतिसार, संग्रहणी, खांसी, श्वास, काश, सिरपीड़ा, मस्तिष्क के रोग, गर्मी, प्रमेह, पत्थरी, मूत्र–विकार, विस्फोटकगर्भी की अधिकता से होने वाले रोग सरलता से अच्छे हो जाते हैं।

## लाल रंग (Red)

यह रंग गरमी देने वाला होता है। और शरीर के निर्जीव भाग को चेतना लाने में अदभुत शक्ति होती है। वायु से अकड़ी हुई नसों कों शिथिलता या उनमें गड्ढे पड़ जाना तथा लूले और लंगडे मनुष्यों के अवयव अच्छे हो जाते हैं। सर्दी से आयी हुई सूजन अर्थात शीतांग इससे अच्छी हो जाती है। शरीर के किसी भाग मैं गति न हो तो लाल प्रकाश डालने से उस भाग में गति आ जाती है। लाल बोतल का पानी बहुत गरम होता है। इसलिये इसके पानी को कुछ विशेष रोगों में ही उपयोग किया जाता है। अतः इसको प्रयोग सावधानी पूर्वक किया जाता है क्योंकि गरमी के कारण खून के दस्त, अथवा के होने का भय रहता है। इस रंग का तेल अधिकतर मालिश अथवा शरीर के बाहरी भाग पर लगाने के काम में प्रयोग किया जाता है। यह पानी आयोडीन (Iodine) से भी अधिक गुणकारी है।

शरीर में इस रंग की कमी से सुस्ती तथा नींद आने लगती है। भूख घट जाती है, नेत्र और नाखून नीले हो जाते हैं तथा दस्त का रंग चिकना और नीला हो जाता है ।

## बैंगनी (Violet)

इस रंग की प्रकृति भी नीले और हरे रंग की भांति यह शरीर का ताप कम करने में उपयोगी है। शरीर में इसकी कमी से हैजा, अतिसार आदि रोग हो जाते हैं। मस्तिष्क की दुर्बलता, तथा हृदय की धड़कन में बेगनी किरण तप्त जल काम करता है।

यह विद्युत किरणें भी कहलाती हैं जिन पर पृथ्वी के सभी प्राणियों का जीवन निर्भर है।

## पीली किरणें (Yellow)

यह रंग पेट जिगर, तिल्ली, फेफड़ो, तथा हृदय के रोगो में बहुत लाभकारी हैं ।-पेट की गडबडाहट, पेट फूलना, पेट में पीड़ा होना। कब्ज, अर्जीण, कृमि रोग, आदि रोग दूर होते है । पीली किरणों का तप्त जल थोड़ा थोड़ा पीने से लाभ करता है अधिक पीने से हानि भी कर सकता है। एक पेट के रोगी को एक बोतल पानी दिन में चार पांच बार पीने को बताया गया। परन्तु उसको इस पर अधिक विश्वास नही था। इस लिये वह सारी बोतल का पानी एक बार में ही पी गया। और पेट में गरमी बढ़ जाने के कारण दस्त होने लगे। यह अपना प्रभाव तुरन्त दिखाता है।

शुद्ध पीले रंग की बोतले प्राय: कम मिलती है अत: लाली लिये हुये मिश्रित रंगवाली (Orange) बोतले आसानी से प्राप्त की जा सकती है।

## हरा रंग (Green)

यह रंग त्वचा चर्म रोग के लिये विशेष लाभकारी है यह रंग पीले और नीले रंग के मिश्रण से बनता हैं। लाल या नारंगी रंग गरम होता है गहरा नीला हलकाया बेगनी रंग ठन्डे होते है। हरा रंग गर्म और ठन्डे रंग के बीच का रंग है अत: यह गरमी तथा सर्दी को सन्तुलित रखता है इस रंग का सबसे बड़ा गुण रक्त को शुद्ध करना है। यह शरीर की गन्दगी को पेशाब, पखाने तथा पसीने द्वारा बाहर निकालती है। बुखार में तो यह रामबाण का काम करता है। टाईफाईड, खसरा, चेचक आदि में तो यह जादू का काम करता हैं। घांव, खुले जख्म, नासूर बहता अकोता, (Weeping Eczeema) आदि अवस्थाओं में हरे रंग की शीशी में तप्त जल बहुत लाभ करता है। यह रंग ज्ञान तन्तुओ और स्नायु

मण्डल को बल देता है। यह रंग कटि व मेरुदण्ड. के निचले भाग के कष्टो को खाँसकर ठीक करने वाला होता है। यह रंग आखो के लिये भी बहुत उपयोगी है।

## गहरा नीला (Deep Blue)

यह ठंडक देने वाला रंग हैं। बुखार को दूर करने में मदद करता है। चर्म रोग में भी यह बहुत लाभ पहुचाता है। गर्मी के दाने चेहरे की कील मुहासे फोडे फुन्सी, आदि नींले रंग की शीशी में तप्त तेल से ठीक हो जाते हैं। नीली रंग की शीशी के तप्त तेल बालो का सफेद होना, गिरना सिर दर्द इत्यादि में लाभ करता है। गहरे नीले रंग से तप्त जल पीने से खांसी, श्वास, सिर दर्द बुखार हृदय रोगों में लाभ करता है।

## नारगी रंग (Orange)

यह रंग गरम होता है। इसकी गरमी लाल रंग से कम होती है। यह पुराने रोगो में प्रारम्भ में तीन चार दिन देकर पेट साफ करने के काम आता है यह रंग दमे के लिये एक औषिधी है, यह भूख बढ़ाता है गैस दूर करता है, यकृत और तिल्ली रोगो में भी लाभ करता है जोड़ो के दद में भी नारंगी रंग का प्रयोग किया जाता है। छपा–की उल्टी (वमन) जुकाम, में इस रंग से तैंयार किया गया जल सर्व श्रेष्ट औषिधी का काम करता है। यह पानी लोह भस्म का काम करता है खुन की कमी (Anima) में इस जल का प्रयोग करना चाहिये।

## बिलोरी सफेद बोतल (Prism Colour–less)

यह जल केवल पीने के काम आता है, क्यो कि इसमें सूर्य के सातों रंगो की किरणे एक साथ आकर्षित होती है, इस लिये मनुष्य शरीर में सातो धातुओ की पुष्टि करता है।

जिस प्रकार रंगीन बोतलो का जल पीने से रोग नष्ट होता है, लाल रंग के वस्त्र से तन रक्तगति तेज होती है, जिससे लकवा आदि अच्छे होते है। पीले वस्त्र पहनने से ज्ञान तन्तु चेतन होते है गठिया, मलावरोध मिटते है। गर्म प्रकृति वालो को नीले वस्त्र और उपदंश खुजली नासूर, चर्म रोगों में हरे वस्त्रों से लाभ होता है।

## पानी तैयार करने की विधि :—

जिस रंग की बोतल में जल तैयार करना हो उसको बहुत सावधानी तथा ध्यान पूर्वक धोकर साफ कर लेना चाहिये। बाहर या भीतर किसी प्रकार का मैल, निशान न रहने पावे और उसमें 3/4 भाग शुद्ध पानी से भर लेना चाहिये। और इस पर इसी रंग का कांच का ढक्कन लगा देना चाहिये यदि इस रंग का ढक्कन न मिले तो लकड़ी का कार्क जो बाजार में आसनी से मिल जाता है लगा देना चाहिये। फिर बोतल को खुले हुये स्थान मे प्रातः 10 बजे से 5 बजे तक धूप में रखना चाहिये जिस स्थान पर बोतल रखते है आस पास कुडा करकट नही होना चाहिये जिस स्थान पर बोतल रखनी हो उस स्थान पर सारे दिन धूप रहना चाहिये किसी अन्य वस्तु की छाया उस पर नही पड़नी चाहिये।

धूप में रखी हुई बोतले धूप से गरम होकर जब उसके खाली भाग पर भाप के बिन्दु बनने लग जायें, तब समझना चाहिये कि पानी तैयार हो गया पानी तैयार हो जाने के बाद इस बोतल को सुरक्षित स्थान पर लकड़ी के तख्ते पर रखना चाहिये और पानी को अपने आप ठन्डा होने देना चाहिये। यह बोतल आठ घण्टों से लेकर तीन दिन तक भी धूप में रखी जा सकती है तैयार किया हुआ जल की (औषधी) की एक मात्रा 1 ओस अथवा 25 ग्राम है। रोगी को दिन में तीन बार लेना पर्याप्त है, यदि रोग पुराना हो तो मात्र बढ़ायी भी जा सकती है। परन्तु इस बात का ध्यान चाहिये कि रंग शरीर में एक दम बढ न जाय,

क्योंकि उससे गर्मी बढ़कर हानि होने की सम्भावना हो सकती है।

## सावधानियां :-

1 बोतल को पूरा न भरें 3/4 भाग ही भरें क्योंकि पूरा भरने पर सूर्य की किरणों का प्रभाव उस पर नहीं पड़ सकेगा और बोतल फूट भी सकती है।

2 बोतल लकड़ी के पटरे के ऊपर ही रखी जाय। यदि ऐसा न किया गया तो किरणों की सारी गरमी पृथ्वी पर उतर जावेगी और यदि धूप में तेजी हुई तो नीचे से पृथ्वी की गरमी और ऊपर से सूर्य के ताप से बोतल बहुत जल्दी गरम हो जावेगी और बिन्दु भी जल्द उत्पन्न होंगे। परन्तु यह जल उपयोगी नहीं होगा।

3 सूर्य अस्त होने पर यदि भूल से बोतल बाहर ही रह जावे तो उसका जल फेंक देना चाहिये। चन्द्रमा और तारे या दीपक आदि का प्रकाश पड़ जाने पर वह निरुपयोगी ही नहीं वरन हानिकारक हो जाता है

4 जिस रंग की बोतलें धूप में रखी जायें इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि एक बोतल पर दूसरी बोतल की छाया नहीं पड़ने देनी चाहिये।

## तेल तैयार करना :—

तेल का उपयोग मालिश के लिये किया जाता है आज कल बाज़ार में सिर से लगाने वाला तेल बड़ी बड़ी सुन्दर बोतलों में मिलता है। उनमें अधिकांश में व्हाइट आयल (White Oil) नामक गन्ध रहित मिट्टी का तेल मिला होता है ऐसे गर्म तेल से मस्तिष्क को शान्त रखने वाले सुगन्धित तेल तैयार नही हो सकते। ऐसे तेल के उपयोग से

सैकड़ों युवकों के बाल कुछ समय में ही सफेद हो जाते हैं। सिर के बाल उड़ जाते हैं। ऐसे तेलों की अपेक्षा इन सूर्य की किरणों द्वारा तैयार किया हुआ तेल अत्यन्त लाभकारी होता है।

जिस रंग का तेल तैयार करना हो उसी रंग की बोतल में 3/4 भरकर लगभग चालीस दिन या एक महीना निरन्तर धूप में रखना चाहिये। शाम के समय इस बोतल को एक बार अवश्य हिला लेना चाहिये। इसे बाहर से साफ कपड़े से पोंछ देना चाहिये। तेल बनाने में लगभग एक माह या चालीस दिन लग जाते है। इसको एक माह से तीन माह तक भी निरन्तर सूर्य की किरणों में रखा जा सकता है, इससे औषधि का प्रभाव तीव्र हो जाता हैं। नीली शीशी में यदि तेल एक माह या चालीस दिन धूप में रखा जाय तो यह अमृतधारा का काम करता है। सिरदर्द में इस तेल को माथे पर मलने पर तुरन्त आराम मिलता है। नींद न आने पर भी इस तेल की मालिश की जा सकती है। दिल की घबराहट में इस तेल की मालिश दिल के ऊपर की जा सकती हैं। जलन वाले स्थान पर फोड़े फुन्सीयों पर लगाने से तुरन्त आराम मिलता है।

इस तेल को बालों से लगाने पर कुछ समय में बालों का सफेद होना, कड़े होना, बालों का गिरना आदि रोगों को दूर करता है। यह तेल बालों को काला करता है तथा उनको तर रखता है। तथा ताकत पहुंचाता है।

## सूर्य स्नान (सनबाथ)

सूर्यस्नान लेने का प्राचीन तरीका यह है कि शरीर पर या जिस स्थान पर सूर्यस्नान लेना हो उसे केले या हरे पत्तों से ढक कर धूप में लेटें। सिर छाया में रखें, धूप स्नान के समय मौसम के अनुसार थोड़ा ठण्डा या गरम पानी पीते रहना चाहिये।

सूर्य स्नान के आधुनिक तरीके के लिये एक विशेष प्रकार का रंगीन शीशे का उपकरण होता है जिसमें रंगीन शीशे इस प्रकार लगे होते हैं कि छाती पर नीली किरणें और पेट पर पीली किरणें पड़ती रहें। सूर्य स्नान के समय शरीर के पूरे कपड़े उतारकर जाँघिया या कच्छी पहनकर उक्त उपकरण में लेटना चाहिये और बीच-बीच में सिर पर ठण्डा पानी डालते रहना चाहिये।
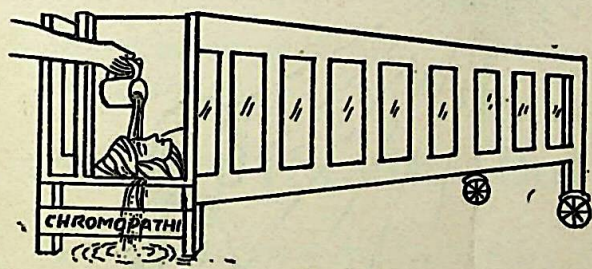
धूप स्नान में 10–15 मिनट बाद पसीना आने लगता है। जाड़े के मौसम में कम पसीना आता है, इस लिये उस समय में 20–25 मिनट तक भी लिया जा सकता है। कुछ लोगों को आरम्भ में पसीना नही आता और तीन चार बार करने पर पसीना आने नाने लगता है। पसीना आवे न आवे इसकी चिन्ता नहीं करना चाहिये। इसके बाद ताजे पानी से शरीर को तौलिये से रगड़ रगड़ कर नहा लेना चाहिये।

सूर्य स्नान से कमजोर हड्डियां, दन्त रोग, चर्म रोग, मन्दाग्नि, ज्ञानतन्तु तथा मांस पेशी सम्बन्धी रोगों से लाभ मिलता है।

इस स्नान को बड़ी सरलता से घर पर भी लिया जा सकता है। सिर पर गीला कपड़ा रखकर, शरीर से पूरे कपड़े निकाल कर सिर्फ लंगोटी या कच्छा पहनकर किसी कुर्सी या जमीन पर लेटकर सूर्य स्नान

करना चाहिये। बहनों को सूर्य स्नान की सुविधा न हो तो उन्हें खूब महीन कपड़ा पहनकर धूप में बैठने या लेटने से लाभ मिल सकता है।

## सावधानियां :—

1 शरीर के तमाम कपडे उतार कर छोटा सा गमछा या लंगोट पहन लेना चाहिये।

2 प्रात: काल सूर्योदय के समय 8 से 12 वजे तक यह स्नान लिया जा सकता है ।

3 सिर को ठन्डे पानी से धोकर भीगे रूमाल या तौलिये से ढक लेना चाहिये ।

4 सूर्य स्नान का प्रारम्भ 15 मिनट से लेकर धीरे धीरे अवधि बड़ा कर एक दो घण्टे तक ले जाया जा सकता है ।

5 भोजन के एक घण्टे पहले और भोजन के दो घण्टे वाद तक सूर्य स्नान न करें ।

## भाप स्नान (*Steam Bath*)

शरीर से विजातीय द्रव्य को वाहर निकालने के लिये मलमूत्र की तरह रोम छिद्र भी एक प्रमुख साधन हैं । हवा और धूप का पर्याप्त सेवन न करने से शरीर के स्वेद छिद्र भी बन्द हो जाते हैं । स्वास्थ्य की दृष्टि से पसीना निकलना वहुत अच्छा है । भाप स्नान के लिये एक विशेष प्रकार की पेटी (CABIN) की आवश्यकता होती है जिसके ऊपर दो ढ़क्कन सम भागों में किवाड़ों के रुप में बटे रहते हैं । किवाड़ों के वीच एक चन्द्राकार छिद्र रहता है । जिससे रोगी का सिर आसानी से बाहर रखा जा सके । भाप स्नान देने के लिये बेंच या कुर्सी अथवा लकड़ी के स्टूल पर रोगी को विठाया जाता है ।

रोगी का सिर वाहर रखकर प्रवेश द्वार को बन्द कर दिया जाता है । भाप स्नान लेने से पहले रोगी का सिर ठण्डा कर देना चाहिये तथा सिर पर ठन्डे पानी से भिगोकर निचोड़ा हुआ तौलिया रखना चाहिये और उस पर बार बार ठन्डा पानी डालते रहना चाहिये । गर्मियों के दिनों में 10 मिनट और जाड़े के दिनों में 15–20 मिन्ट में खूब पसीना आ

जायेगा। पसीना आते ही घवराहट न मालूम हो तो 5–7 मिन्ट तक पसीना आने दिया जा सकता है। पर यदि पसीना आते ही घवराहट मालूम हो तो भाप स्नान समाप्त कर देना चाहिए और शरीर को अच्छी तरह पोंछकर ठण्डे पानी से नहायें। नहाने के वाद शरीर को तोलिये से सुखा कर 0–10 मिनट का कटिस्नान लें। भाप स्नान में शरीर में हल्की गर्मी बढ़ जाती है जो कटिस्नान से दूर हो जाती है।

इस स्नान को वड़ी सरलता से घर पर भी लिया जा सकता है। इसे लेने के लिए किसी विशेष सामान आदि की आवश्यकता नहीं होती। वेंतकी आसन युक्त कुर्सी पर बैठाकर आसानी से भाप स्नान लिया जा सकता है। रोगी को एक कुर्सी पर वैठाकर एक कम्बल से पीछे और आगे की ओर ढककर इस प्रकार जमीन तक और रोगी की गर्दन तक ढक देना

चाहिये कि कम्बल जमीन पर चारों ओर लटकता रहे। इसके वाद कुर्सी के नीचे भाप छोड़ देनी चाहिये। भाप तैयार करने के लिये थोड़ें खर्च में एक भाप उत्पादक यन्त्र वनाया जा सकता है। मुँह ढके टीन के एक डिव्वे में एक नल लगा देने से भाप यन्त्र वन जाता है।
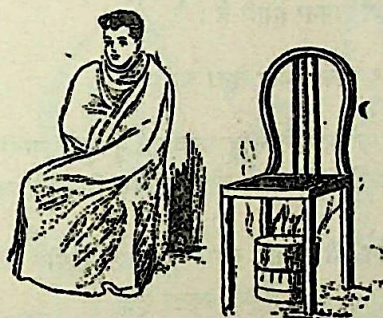
भाप स्नान लेने से पहले पेडू की सफाई कर लेना जरूरी है। इस लिये हमेशा रोगी को एनिमा लेने के वाद ही स्टीम बाथ करना चाहिये जिनका वजन स्वभाविक अवस्था में कम हो, उनको भी भाप स्नान से वहुत लाभ होता है। भाप स्नान लेने से पहले वजन घटता ही है। इसमें डरना नहीं चाहिये क्योंकि शरीर में मृत जीव सेल आदि जो विकार सन्चित रहता है वह वाष्प स्नान के वाद पसीने के द्वारा बाहर निकल जाता है जिससे 2–3 किलो वजन घट जाता है किन्तु इसके कुछ दिन वाद शरीर में नये तन्तुओं का निर्माण होता है, नई मास पेशियां गठित होती हैं और शरीर का वजन पहले से पांच या छः किलो बढ़ जाता है। भाप स्नान से चर्म रोग, गठिया, मोटापे, से छुटकारा मिलता है तथा सौन्दर्य की प्राप्ति होती है। भाप स्नान सप्ताह में दो तीन वार से अधिक नहीं लेना चाहिये।

सावधानियां :-

1 भाप स्नान लेते समय सिर पर ठण्डे पानी की पट्टी रखना हरगिज नहीं भूलना चाहिये सिर की ठण्डी पट्टी वाष्पस्नान के कारण गर्म हो जाती है। इसलिये इस पर वार वार ठंडा पानी डालते रहना चाहिए अन्यथा रोगी को घबराहट, चक्कर एवं कभी कभी वेहोशी आने की संभावना होती है।

2 नंगे शरीर होकर भाप लेना चाहिए।

3 वाष्प स्नान से पहले नींबू शहद का गुनगुना पानी पिलाने से रोगी को कमजोरी नहीं आती तथा पसीना भी जल्दी आ जाता है।

4 वाष्प स्नान की तीव्रता बढ़ाने के लिए रोगी को बीच–बीच में गुनगुना पानी पिलाया जा सकता है।

5 रक्तचाप रोगी को तथा कमजोर रोगी की छाती पर ठण्डे पानी की पट्टी लपेटनी चाहिए।

6 वाष्प स्नान से पहले एनिमा लेना आवश्यक है।

# आंशिक वाष्प स्नान (*Local Steam*)

कई बार सारे शरीर में भाप देने की आवश्यकता नहीं होती। कभी कभी सारे शरीर में भाप का प्रयोग करने पर भी किसी खास अंग पर वार वार आंशिक वाष्प स्नान प्रयोग करने की आवश्यकता होती है। इसके द्वारा किसी अंग पर दबाव डाले विना उक्त स्थान पर अणु परमाणु तक में भी सेक पहुंच जाता है। मुंह के भीतरी भाग आदि में जहां सेक

की गर्मी प्रत्यक्ष रूप में नहीं पहुंच सकती, भाप वहां भी आसानी से जा पहुंचती है। हाथ, पांव, मुँह, गला, आंख और कान आदि सभी अंगों पर वाष्प का प्रयोग किया जा सकता है।

आंशिक वाष्प स्नान बहुत से रोगों में लाभ पहुंचाता है। जहरीले कीड़ों के काटने, अंगों में मोच आने, खांज खुजली, बवासीर, भगन्दर, घुटनों का दर्द आदि में भाप स्नान बहुत लाभकारी है क्योंकि पसीना निकलने से दर्द अपने आप कम हो जाता है।

# पूर्ण टब स्नान (*Neutral Bath*)

पूर्ण टब स्नान के लिए (आदमकद) टब में सुहाता सुहाता गर्म पानी भरिये और उसमें 15–20 मिनट तक लेटे रहिये। सिर को पानी से बाहर रखिये और सिर पर ठण्डे पानी की पट्टी रखिये। पट्टी गर्म होने पर बीच में उसको बदलते रहें। हर हालत में सिर ठण्डा रखना जरूरी है। अन्यथा चक्कर आने का भय रहता है।
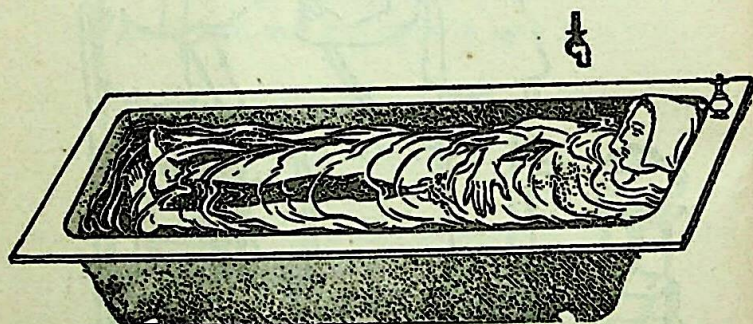
गरम टब स्नान के बाद ठण्डे पानी का फुहारा स्नान या सादा स्नान बहुत जरूरी है। अगर रोगी कमजोर हो तो ठण्डे पानी के भीगे तोलिये से पोंछ लेना बहुत जरूरी होगा। ठण्डे पानी का स्पर्श न होने से कमजोरी महसूस होगी तथा रक्त की अल्पता हो जाती है। यह स्नान ताजे, ठण्डे, हल्के गर्म जल से आवश्यकता अनुसार लिया जा सकता है तथा आवश्यकता अनुसार उसमें नमक भी मिलाया जा सकता है।

यह स्नान गठिया, अनिद्रा में लाभदायक है।

卐

# गीली चादर लपेट *Wet Sheet Pack*

स्नायु तन्तुओं को बल देने के लिये शरीर से मल निकालने और विजातीय द्रव्य निष्कासन के लिये इस लपेट का प्रयोग किया जाता है। सारे बदन को गीली पट्टी लेने के लिये तीन–चार मोटे कम्बलों पर ठण्डे
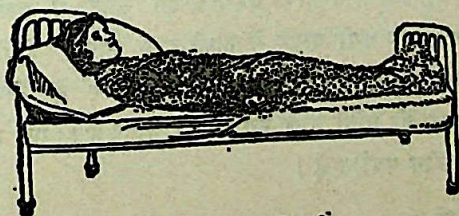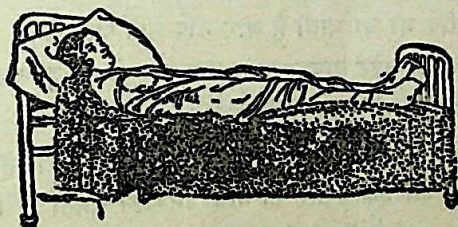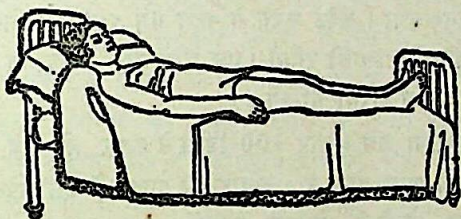
Wet-sheet Pack

पानी से भिगोकर पतली सूती चादर बिछानी चाहिये। बाद में रोगी की दोनों बाहों को सिर से ऊपर रखवा देना चाहिये। इसके बाद चादर को

एक तरफ दबवा दें, कूले के नीचे के चादर के भाग को उस तरफ की टांग पर लपेट कर रोगी की बाहों को नीचे आने देना चाहिये ताकि उससे चादर को दबा सके। शरीर के दूसरी तरफ भी इसी तरह गीली चादर से लपेटना चाहिये। इस प्रकार सारे शरीर को टांगों सहित खूब अच्छी तरह कम्बलों में लपेट लें। कम्बल में बदन को हवा न लगने पाये इसलिये औढ़ाये जाते हैं इससे गर्मी होगी और आधे घन्टे से एक घण्टे तक पसीना निकलेगा। लपेट करने से पहले गर्म पानी पी लिया जाये तो पसीना निकलने में आसानी रहेगी। एक घन्टे बाद लपेट से निकलकर ठन्डे पानी से स्नान करना चाहिये।

साधारणतया जब बुखार 100 डिग्री से ऊपर हो तब इस लपेट का बहुत अच्छा लाभ होता है। बुखार की हालत में इस लपेट से कुछ ठन्डक मालूम होती है, लेकिन बाद में ठन्डक सुहाने लगती है। और कभी कभी नींद भी आ जाती है और नींद आने पर रोंगी को जगाना नहीं चाहिये। यह लपेट साधारणतया ज्ञान तन्तुओं की दुर्बलता दूर करने पीलिया, चर्म रोगों में लाभ पहुंचाती है।

इस लपेट के द्वारा शरीर से इतना विष निकलता है कि लपेट खोलते समय उसमें एक प्रकार की गन्ध निकलने लगती है। जो लोग तबाकू पीते है, उन्हें यदि काफी देर तक इस लपेट में रखा जाये तो लपेट के भीतर रखी गयी चादर में काफी गन्द मालूम होगी। जिनके शरीर में काफी दूषित पदार्थ रहता है उनके शरीर से निकले विकार के कारण चादर भी गन्दी पीले रंग की हो जाती है। एक माह में चार बार इसका प्रयोग पर्याप्त है।

## सावधानियां :-

रोगी को चादर लपेटने से पहले रोगी का शरीर गर्म है या नहीं देख लेना चाहिये। रोगी का शरीर गरम न हो तो उसके शरीर को गर्म करके इसका प्रयोग करना चाहिये।

# मालिश (*Massage*)

मालिश शब्द प्राचीन शब्द मंर्दन से निकला है। मंर्दन क्रिया का अर्थ है शरीर को हल्के हल्के रगड़ना। दूसरे शब्दों में इसे हम इस प्रकार कह सकते हैं कि हल्के हल्के हाथों से रगड़कर शरीर के किसी अविकसित या रोग ग्रस्त अंग में रक्त संचालन को गति प्रदान करना। आधुनिक शरीर विज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार शरीर में जितनी अधिक क्रिया शीलता रहेगी, शरीर के विशेष में रक्त का भ्रमण बड़ेगा और वह अंग मजवूत होगा। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये प्राचीनकाल से मालिश का उपयोग होता रहा है। इतिहास वेत्ताओ की राय में चीन में सबसे प्राचीन समय से मालिश (मर्दन) क्रिया का उपयोग होता रहा हैं। ईसा के तीन हजार वर्ष पूर्व ही चीन के चिकित्सकों ने इसका उपयोग प्रारम्भ कर दिया था।

शरीर के विभिन्न अंगों जोड़ों तथा स्नायु मण्डलों का मर्दन कर उनकी कठोरता तथा थकान दूर करने के साथ साथ सुन्दर सुड़ौल बनाने में मालिश का वहुत महत्व है। भारत में भी मालिश का प्रयोग प्राचीन समय से होता आया है। बाल्मीकी रामायण में भरत के सैनिकों की मालिश का वर्णन महर्षि भारतद्वाज ने किया है। वात्स्यायन मुनि ने तो काम सूत्र में मालिश को कौशल माना है। भविष्य पुराण में ब्रह्मा पर्व में पत्नी के मालिश में निपुण होने को एक विशेषता घोषित किया गया है।

पीड़ा को दूर करने के लिये मालिश के अलावा कोई दूसरा दर्द नाशक दवा नहीं है। इस विधि उपचार करने को गति उपचार कहते हैं। इस विधि से मालिश करने के कई तरीके हैं। एक माता अपने बच्चों के शरीर में चोट लगे हुये स्थान पर मालिश करती हैं। पशु अपने

घाव को चाटता है मालिश करने से शरीरिक और मनो विज्ञानिक प्रभाव पड़ता है। स्नायु दुर्बलता के लिये रीड़ की मालिश से स्नायु दुर्बलता दूर होती है "लाखों दवा से यह अच्छी है" मानसिक रुप से विकार ग्रस्त लोगों के मेरू दन्ड (रीड़ की हड्डी) को थपकी देते हुये नीचे की और
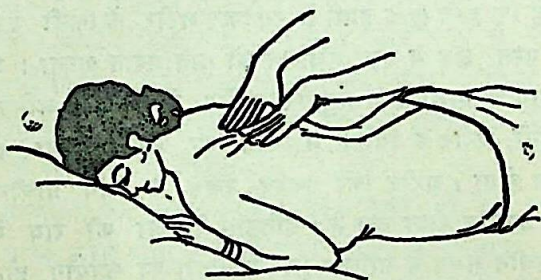
मालिश करने से उसके परानुकम्पी तंत्रिका मण्डल (Parasympathetic Nervos System) पर प्रभाव पड़ता है। हृदय की ओर थपकी देते हुये और गूथने जैसी मासपेशियो की मालिश करने पर मासपेशिया संकुचित होकर शिथिल होती हैं ऐसी स्थिति में शिरायें ओर लसिकायों में दवाव पड़ता है। दबाव के कारण शिराओं के रक्त और लसिका तरल पदार्थ) हृदय की ओर जाते हैं। लासिका और शरीर के तरल (शरीर का स्वच्छ पदार्थो की गति को तेज करके हम शरीर के दूषित पदार्थ को निकालते है। शरीर के दूषित पदार्थों को कम करने तथा रक्त और लसिका को प्रवाहित होने के लिये व्यवस्था करने से रक्त को अधिक ओक्सीजन प्राप्त होती है और मासपेशियों की शक्ति बढ़ती है।

मालिश नियत कार्य में बाधा डालने वाले पदार्थों से मुक्त कर सकती है। हमारे शरीर में अनेक मासपेशियों के फूलने से गति अनुभव होती है जिससे उनको जीवन शक्ति प्राप्त होती है। जो रोगों को दूर करने में सहायक होती है तथा रक्त तन्तुओ को परित्यक्त पदार्थ

बाहर फेंकने और नवीन रक्त द्रव्य के संचार करने में सहायता पहुंचाती है। जिससे रक्त प्रवाह की गति तेज हो जाती है। जिससे रक्त में मिले विषक्त पदार्थ (विजातीय द्रव्य) अलग हो जाते हैं। जिससे रक्त शुद्ध होकर शरीर नवजीवन स्फुर्ति, ओज से परिपूर्ण हो जाता है। मालिश
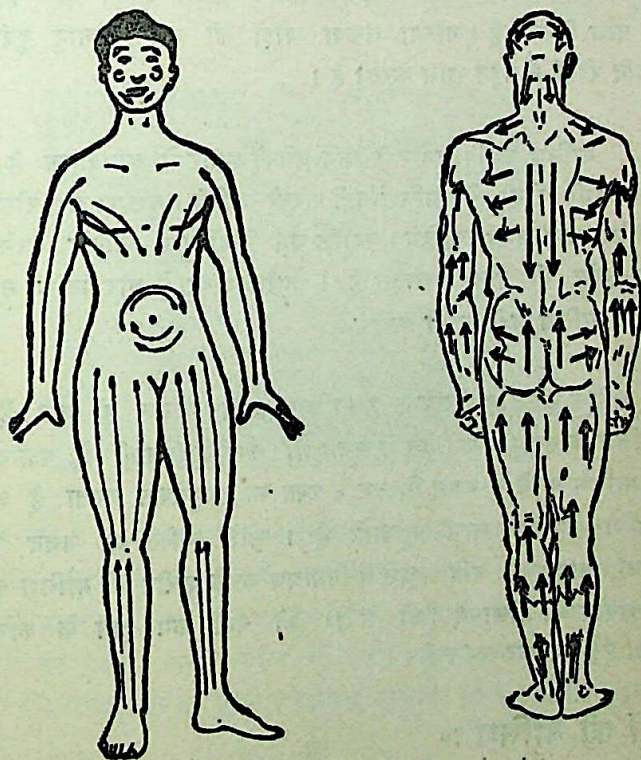
वैज्ञानिक मालिश की विधि

करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि मालिश इस ढंग से

की जाये जिससे रक्त का प्रवाह हृदय की ओर होता रहे। जिससे अशुद्ध रक्त की शुद्धि का कार्य जारी रहे।

थकावट दूर करने के लिए मालिश से बढ़कर शायद ही उत्तम प्रयोग कोई हो। जो रोगी व्यायाम नहीं कर सकते उनको भी मालिश से लाभ मिलता है। गठिया, लकवा, जोड़ों की सूजन, स्नायु दुर्बलता आदि रोगों में बहुत लाभ करती है।

मालिश यद्यपि शरीर के लिये अनेकों प्रकार से लाभदायक है तो भी सभी रोगो में मालिश नहीं करनी चाहिये। बुखार, चर्म रोगों में मालिश नहीं करनी चाहिये। क्योंकि चर्म रोगों पर मालिश करने से यह और भी फैलता जाता है। गर्भ अवस्था में और पेट की सूजन में पेट मालिश नहीं करनी चाहिये।

सूखे हुये हाथ पैर के तन्तु मालिश द्वारा कोमल हो जाते हैं। मालिश के समय थपकी देने से सूजन भी कम हो जातीं है, पक्षाघात में मालिश करने से नर्वस सिस्टम में रक्त का सरकुलेशन बड़ता है और पक्षाघात को बहुत लाभ पहुंचाती है। मोटे व्यक्ति जो वजन कम करना चाहते हैं यदि अहार में नियन्त्रण करके शरीर की मालिश करें तो शरीर का ढ़ीलापन (जो शरीर की चर्वी कम होने के कारण होता है) कम कर सकते है।

## पैरों की मालिश :-

मालिश का प्रारम्भ पैरो से करना चाहिये। प्राचीन समय में जब किसी व्यक्ति का शरीर ठन्डा हो जाता था तब उस समय लोग पैरों के तलवे मलते थे इसका कारण यह है कि हमारे शरीर में नाड़ियों का

छोर पैर के तलवों पर होता है। अतः तलवों पर मालिश करके शरीर के अन्य भागों को बहुत लाभ पहुंचाया जाता है। अतः सर्व प्रथम विना तेल लगाये पैरों के तलवे अच्छी तरह रगड़ें, और अंगुलियों तथा तलवों को तेल लगायें अंगूठे को मसलें और जोड़ो को हिलायें, टखनों में गोलाई से मालिश करें और टांगों को अच्छी तरह मसलें तथा जांघों को
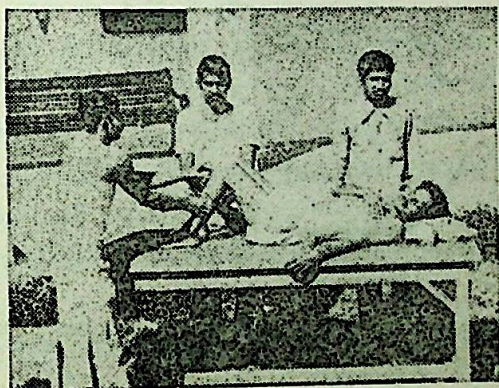
चारों ओर से मसलें। अपनी चिकनी हथेलियों को घुटने से कूल्हों को सन्घतिक दवाव देते हुये ले जावें। साईटिका दर्द में कभी कभी टांगों में दर्द हो जाता है। यह एक मशहूर दर्द है। यह नितम्बों से निकलकर टखनों तक जाने वाली शरीर के सबसे लम्बे स्नायु मण्डल में होता है। जांघों और पूरे पैर पर मालिश करने से राहत मिलती है।

## पेट की मालिश :-

पेट की मालिश करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि रगड़ काफी हलके हाथ से करनी चाहिये क्योंकि पेट में मुलायम आँतें रहती हैं।
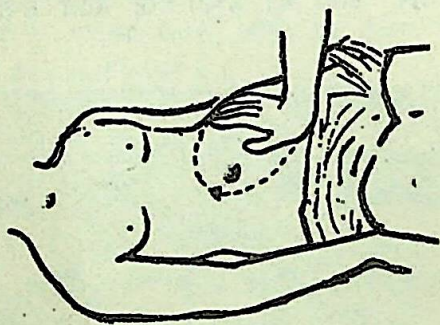
पेट की मालिश हमेशा दाहिनी ओर से बांयी ओर गोलाई में करनी चाहिये।

## छाती की मालिश :-

हाथों से तेल लगाकर हथेलियों से दबाते हुये सीने से नीचे की ओर मालिश करते हुये गोलाई में घुमाकर पसलियों पर थोड़े दबाव के साथ मालिश करने से हृदय की गति क्रियान्वित होती है। छाती की मालिश करते समय भी अन्य स्थानों की तरह घर्षण के साथ मालिश करनी चाहिये। छाती की मालिश के लिये रोगी के बगल में खड़े होकर छाती का घर्षण करना चाहिये । छाती की मालिश के लिये रोगी के बगल में खड़े होकर छाती का घर्षण करना चाहिये। पहले रोगी की छाती पर दोनों हाथ रखकर एक हाथ बगल में जहां तक आये वहां तक दबाते

हुये फैलानी चाहिये और दूसरा हाथ जहां तक जा सके उतनी दूर तक ले जाना चाहिये। फिर हाथों को वगैर उठाये ही प्रत्येक हाथ को फिर छाती के एक छोर तक ले जाना चाहिये। इसके बाद रोगी की छाती पर अंगुलियों का दबाव थपकी, कम्पन, खड़ी थपकी आदि का व्यवहार करना चाहिये।

## हाथों की मालिश :-

हाथों की मालिश करने के लिये सर्वप्रथम हाथों की हथेलियों को अच्छी तरह रगड़ना चाहिये। इसके बाद अंगुलियों के जोड़ों को धीरे धीरे मलना चाहिये। इसके बाद बलपूर्वक हाथों को कन्धों की तरफ रगड़ते हुये ले जाना चाहिये। कन्धों की मालिश बलपूर्वक होनी चाहियें कन्धों को अपनी बांह से बलपूर्वक दबाना चाहिये। पेरालेसिज के रोगों तथा हेमीप्लेजिया नामक रोग में भी बहुत लाभ पहुंचता है।

## पीठ (रीढ़) की मालिश :-

रीढ़ की मालिश करने के लिये रोगी को पेट के बल लिटा देना चाहिये। पीठ की मालिश हमेशा ऊपर से नीचे की ओर होनी चाहिये। हमारी रीढ़ की हड्डी शरीर में सर्वाधिक महत्व रखती है। इसके स्वस्थ रहने से यौवन और सौन्दर्य कायम रखा जा सकता है। यदि रीढ़ मजबूत है तो सम्पूर्ण शरीर में दीर्घ काल तक शक्ति और जीवन प्रवाहित होते रहेंगे। मालिश के द्वारा यों तो सारे शरीर को पूर्ण स्वस्थ रखा जा सकता है, पर रीढ़ की हड्डी को सही तरीके से बैठाकर मालिश द्वारा नाड़ी-दुर्वलता, रक्तचाप, का बढ़ जाना, अधरंग, साईटिका, जोड़ों का दर्द, मोटापा, दुबलापन, रीढ़ की हड्डी की मालिश करने से ठीक हो सकते हैं।

रीढ़ की मालिश में घर्षण का प्रयोग विशेष स्थान रखता हैं। मेरुदण्ड के दोनों ओर हाथों को रखकर दोनों हाथों को घुमाकर हाथों को कन्धों की ओर से नितम्बों की ओर चलना चाहिये। इसके बाद तर्जनी से मध्यमा और दोनों उंगलियों को मस्तिष्क के नीचे गर्दन के पिछले भाग और मेरुदण्ड के अन्तिम भाग को वार बार खींचना होता है। इसके साथ रोगी के पिछले भाग पर थपकी, उंगलियों का दवाव, कम्पन, गहरा दलन, मुक्की और खड़ी थपकी आदि का प्रयोग करना चाहिये।

## स्पंज बाथ (*Sponge Bath*)

कमजोर रोगियों के लिये या बुखार की अवस्था में साधारण स्नान के स्थान पर स्पन्ज करना लाभ करता है। इस स्नान के लिये रोगी को लिटाकर एक चादर या कम्वल से ढक देना चाहिये और शरीर को गीले तौलिये के साथ पोंछना चाहिये। पहले चार मिन्ट गीले तौलिये में एक पैर को धीरे धीरे रगड़कर पोंछना चाहिये, फिर सूखे तौलिये से पैर को सुखाकर एक मिनट के लिये त्वचा को हांथ से रगड़ें ताकि त्वचा में गरमी आ जाये। यदि रोगी को बुखार हो तो इस प्रकार से रगड़ने की जरूरत नहीं। फिर दूसरा पैर, फिर एक–एक हाथ, फिर पीठ तथा पेट, छाती और अन्त में सिर और मुँह को ठण्डे पानी से धोकर सुखा लें इस प्रकार सारे शरीर को स्पन्ज करने में आधा घन्टा लग सकता है। रोगी की शक्ति के अनुसार हीं ठण्डे पानी या हल्का गर्म पानी लिया जा सकता है। यह मोटापा, मियादी बुखार, चर्म रोग में लाभ पहुंचाता है।

साधारण कमजोर रोगी को या बुखार की अवस्था में स्पन्ज बाथ से काफी लाभ पहचता है। बहुत से रोगी ठण्डें पानी से डरते है ऐसें रोगियों को गरम या गुनगुने पानी से यह स्नान कर सकते है। बाद में धीरे धीरे पानी को ठण्डा करते जाना चाहिये। तथा पुराने रोगियों को अधिक ठण्डे पानी से स्नान कराना चाहिये। इस प्रकार रोगी ठण्डे पानी का आदि हो जाता है ओर उसे किसी प्रकार की हानि होने का सम्भावना नहीं रहती है।

# गरम ठण्डी सेक
# (*The Alternate Hot Cold*)

किसी अंग की मरम्मत करने अथवा दर्द से आराम के लिये बारी-बारी से गरम और ठण्डे जल के प्रयोग से अधिक लाभदायक और कोई चीज नहीं है। किसी अंग पर जब गरम सेक दिया जाता हैं, तब उस अंग की सूक्ष्मतम रक्तवाहक नलियां भी फैल जाती हैं और उन मार्गों में उस समय रक्त प्रवाहित होने लगता है। इस प्रकार किसी अंग को एक–एक बार शीतल और एक बार गरम करने से उस अंग में एक प्रकार के पम्प का काम होता है। इसी कारण दूषित अंग थोड़े समय में ही विकार-रहित हो जाता है।

गरम ठण्डी सेक के लिये आवश्यकतानुसार 104 डिग्री पानी में 3–4 तह वाले कपड़े को भिगोकर या गरम पानी की भरी बोतलों (Hot Water Bag) का प्रयोग करना चाहिये। ठण्डी सेक के लियं 65 डिग्री पानी या मटके के ठण्डे पानी में सूती कपड़ा भिगोकर सेक देने वाले स्थान पर रखना चाहिये। गरम ठण्डे सेक का अन्त ठण्डे पानी से करना चाहिये। पेट पर गरम ठण्डा सेक पुराना कब्ज, वायु-विकार एवं दुर्बलता दूर करने में सहायक होता है।

# गरम ठण्डा कटिस्नान

प्राकृतिक चिकित्सा में गरम ठण्डा कटिस्नान एक बहुत उपयोगी उपचार है। इसके लिये दो कटिस्नानों के टब की आवश्यकता होती है। यह गरम ठण्डी पट्टी का एक दूसरा रूप है। एक टब में इतना गरम पानी भरना चाहिये जितना सहन कर सकें। दूसरे टब में ठण्डे कटिस्नान की

तरह ठण्डा पानी भरना चाहिये। इस स्नान के पहले सिर को ठण्डे पानी से धोकर एवं सिर पर गीला तौलिया रखकर यह स्नान लेना चाहिये। पहले पांच मिनट गरम पानी से कटिस्नान लेने के तुरन्त बाद ही फिर दो मिनट ठण्डे पानी से कटिस्नान लेना चाहिये। यह यह समय में तीन बार करना चाहिये। गरम ठण्डा कटिस्नान गरम पानी के टब से शुरु कर अन्त में ठण्डे पानी से करना चाहिये।

यह स्नान कुछ दिनो तक लेने से सभी यन्त्र सबल होते हैं, पेशाब की रुकावट, गर्भाशय सम्बन्धी रोग, छोटी बड़ी आंत तथा अजीर्ण आदि दूर होते हैं। पथरी के रोगों में, पेट की गैस, पोस्टेट ग्लेण्ड्स सम्बन्धी रोगों में लाभप्रद है। गरम कटिस्नान से पेडू के समस्त अवयव गरम होकर मुलायम हो जाते हैं तथा वहां की रक्तवाहिनियां फैल जाती हैं। और जब ठण्डे पानी में बैठते हैं तो उस भाग की रक्तवाहिनियां संकुचित हो जाती हैं। जिस प्रकार यदि हम रबड़ की नली को गरम करें तो गरम होने पर वह फैल जायेंगी और ठण्डा करने पर सिकुड़ जायेंगी। इस तरह सिकुड़ने फैलने से नाड़ियों के अन्दर पड़ा मल मलमार्ग द्वारा बाहर निकल जायेगा। पुराने कब्ज के लिये यह उपचार बहुत उपयोगी है। इस स्नान से पेशाब का रूकना, कमर की नस का दर्द यकृत के दोष, स्त्रीयो के मासिक धर्म की खराबी गाठिया, पैरो मग सुन्न पड़ जाना, कमर के नोचे जांघों में दर्द होना, कष्टरज आदि रोग शीघ्र दूर हो जाते है। इस स्नान से कुछ ही दिनों में पेट के सभी यन्त्र सबल हो जाते है पाचन शक्ति बढ़ती है, अजीर्ण दूर होता है। जननेन्द्रिय के विभिन्न रोग प्रदर, के साथ दर्द के साथ माहवारी होने आदि यह स्नान बड़ा लाभप्रद सिद्ध होता है।

# पेडू लपेट (*The Wet Girdle*)

पेट की गीली लपेट के लिये एक सात फुट लम्बा और 10-12 इंच चौड़ा सूती कपड़ा लेकर पानी में भिगोकर निचोड़ लेना चाहिये और
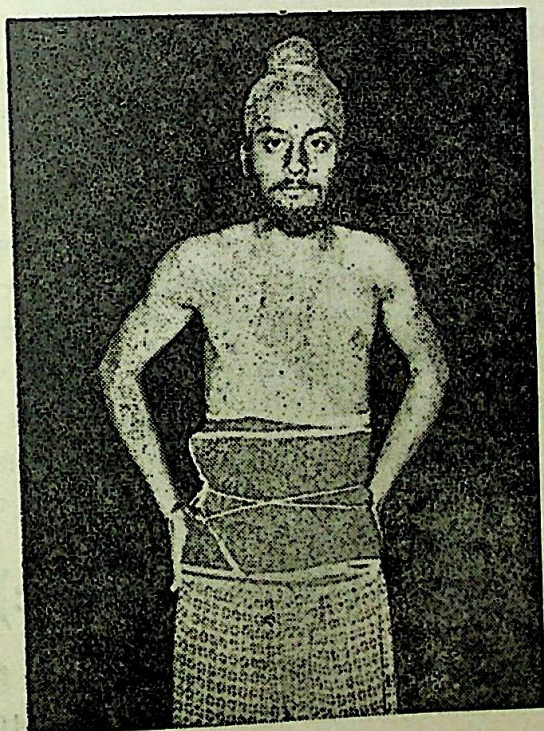
उसे नाभी से लेकर नीचे कमर के भाग को इस तरह लपेटना चाहिये कि कपड़ा अच्छी तरह से त्वचा को छूता रहे। फिर ऊपर से उतना ही लम्बा चौड़ा ऊनी कपड़ा लपेटना चाहिये और उसे सेफ्टी पिन या रस्सी

से इस प्रकार बांधना चाहिये कि वह ढीला न हो मके। जोर से कसकर भी इसे नहीं बांधना चाहिये।

पट्टी लगाने से पहले पेड़ू को गरम पानी की बोतल से या इन्फारेज से गरम कर लेना चाहिये।

जहां पट्टी लगायी जावेगी पहले वहां ठण्डक मालूम होगी और पांच दस मिनट बाद हल्की गरमी मालूम होगी। यदि 10 मिनट बाद भी पट्टी की ठण्डक न जाये तो समझना चाहिये कि पट्टी ढीली बंधी है या कपड़े की गीली पट्टी को कम निचोड़ा गया है या वह अधिक मोटी है। जहां भी गल्ती हो वहां ठीक करना चाहिये। यह एक घण्टे से दो घण्टे तक लगी रह सकती है। इसे रात को बांध कर भी सो सकते हैं। पेट सम्बन्धी रोगों के लिये जैसे संग्रहणी, कब्ज, गैस ट्रबल और सभी प्रकार के स्त्री रोगों में लाभ पहुंचाती है। पट्टी के भीगे कपड़े को प्रतिदिन साबुन से साफ कर लेना चाहिये, नहीं तो पेड़ू के स्थान पर फोड़े फुँसियां हो सकती हैं। इस पट्टी में बड़ी सुविधा यह है कि इसका व्यवहार करने पर दैनिक काम–काज करने में कोई असुविधा नहीं होगी एवं रात को नींद लेने में कभी बाधा नहीं पहुंचती।

## छाती लपेट (*Chest Pack*)

जब छाती के चारों ओर गरम ठण्डी पट्टी लपेट दी जाती है तब उसे छाती की लपेट कहते हैं। छाती की गीली लपेट के लिए 10–12 फुट लम्बी तथा 9 इंच चौड़ी सूती कपड़ा लेकर, पानी में निचोड़ कर छाती पर इस प्रकार लपेटते हैं कि छाती दोनों कंधों का ऊपरी भाग तथा छाती के पीछे पीठ का हिस्सा ढक जाये। और फिर ऊपर से ऊनी पट्टी इस प्रकार बांधते हैं कि सूती पट्टी ढकी रहे। यह पट्टी एक घण्टे से

दो घन्टे तक लगायी जा सकती है । रात को इसको वांधकर भी सो सकते हैं ।
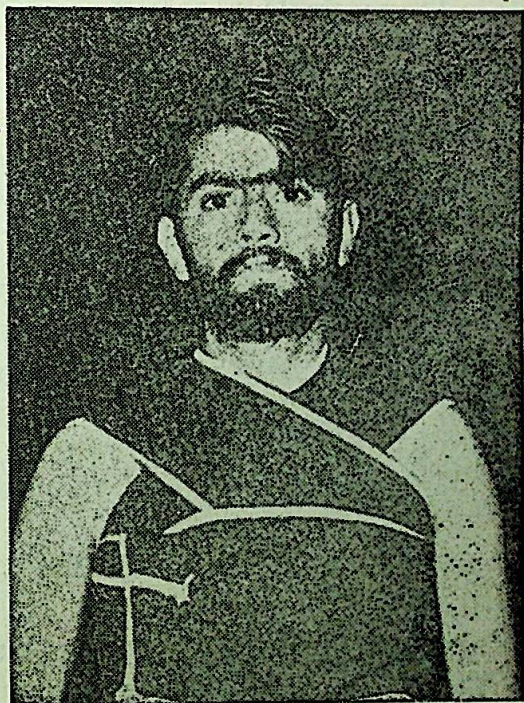
ब्रोंकाइटीस वैकोन्यूमोनिया और न्यूमोनिया रोग होने के साथ ही अगर इस लपेट का प्रयोग किया जाए तो थोड़े ही समय में छुटकारा पाया जा सकता है । दमा और पुराने ब्रोंकाइटीस में बहुत लाभ पहुंचाती है । नयी और पुरानी प्लूरिसी में भी यह लपेट लाभदायक है । वास्तव में सर्दी, जुकाम, ब्रोंकाइटीस, न्यूमोनियां, प्लूरिसी और यक्ष्मा रोग की यही सर्वप्रधान चिकित्सा है ।

यक्ष्मा रोग में छाती लपेट बहुत लाभदायक होती है। कुछ दिनों तक इसके व्यवहार से रोगी की खांसी, ज्वर, रात का पसीना कम हो जाता है और छाती के भीतर के घाव भी जल्दी ठीक हो जाते हैं। इस पट्टी के प्रयोग से आक्रान्त स्थान में रक्त का संचालन होता है तथा श्वेत कणों की वृद्धि होती है। इस कारण इसके प्रयोग से छाती में होने वाले सभी रोग अच्छे हो जाते हैं।

# पैरों की लपेट (*Leg Pack*)
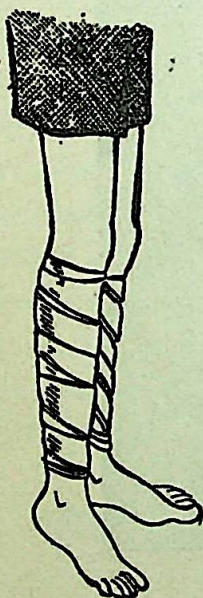
यह लपेट चार इंच चौड़ी और चार फुट लम्बी सीधी पट्टी घुटने तक लपेटनी होती हैं। इसके ऊपर ऊनी कपड़ा लेकर बांध देना चाहिए। रात को सोते समय यह लपेट सब से उत्तम है। सधारणतया इसका उपयोग एक घन्टे के लिए होता है। लेकिन रोगी को आराम मालूम आराम होने पर यह सारी रात भर रखी जा सकती है।

कमजोरी के कारण जिसके हाथ पैर ठन्डे हो जाते हैं अथवा दमा के दोरे में पैर गरम स्नान के बाद भी यह लपेट ले सकते हैं ताकि पैर गरम रहे और दमे का दौरा पुनः ना पडे। इसके द्वारा इन सारे अंगों के दूषित खून को नीचे खींच लिया जाता है। नयूमोनिया, ब्रोंकाईटिस, यकृत की सूजन, मूत्र गंथियों की सूजन और जरायु के रोगों में यह लपेट बहुत लाभ करती है।

नोट :— यदि रोगी ठन्डा कपड़ा सहन न कर सके तो सिर्फ सूती ऊनी कपड़े से भी हाथ पैर ठण्डे नहीं होंगे। अथवा गुनगुने पानी में भिगोये हुये सूती कपड़े के ऊपर ऊनी कपड़ा लपेटना चाहिये।

# गले की लपेट (*Neck Pack*)

इस लपेट के लिये चार इंच चौड़ा तथा डेढ़ मीटर लम्बे सुती कपड़े को गुनगुने पानी में भिगोकर गले से लपेटें, उसके ऊपर मफलर लपेट देने से लपेट हो जाती हैं।
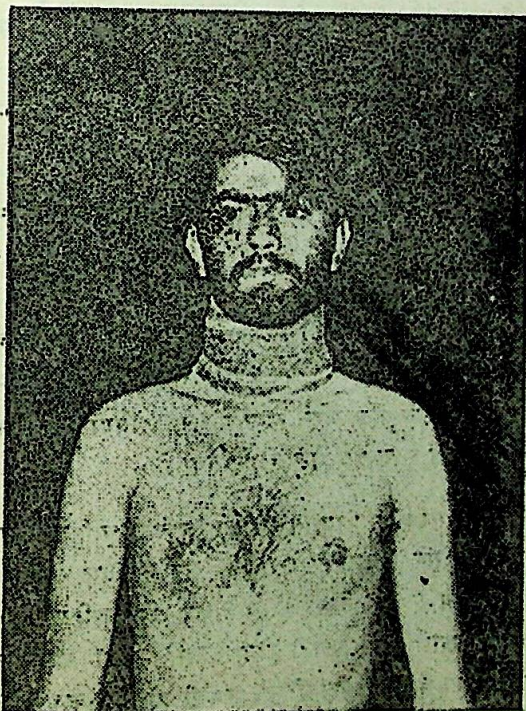
खाँसी, दमा श्वास-नलिका में सूजन, गले आने पर, टांसिल, आदि में लाभ होता है। इस पट्टी से सारे शरीर पर प्रभाव पड़ता है।

इस पट्टी द्वारा गले के ऊपर और नीचे की गरमी खींच ली जाती है। इससे गले से सम्बन्धित सभी रोग ठीक हो जाते हैं। यह पट्टी 2–3 घन्टे या इससे अधिक समय तक प्रयोग में लायी जा सकती है।

# कुंजर (गजकरणी)

कुँजर, गजकरणी, जल धोती, वमन धोती, ब्रह्मादातुन एक ही क्रिया को कई नाम से पुकारते है। जैसे हाथी अपनी सूँड से पानी पीकर उसे सूँड द्वारा ही निकाल देता है और अपने को सदा नीरोग रखता है। उसी प्रकार मनुष्य भी कुँजर क्रिया (वमन या उल्टी) करके अपने आप को निरोग रख सकता है।

कागासन में बैठकर तीन-चार गिलास (लगभग दो लीटर) गुनगुना नमकीन पानी अर्थात पेट भर पानी पीकर नाभि पर बायां हाथ रखते हुये तुरन्त कमर को झुकाकर सामने की ओर 90 अंश का कोण बनाते हुये खड़े हो जायें। अब दाहिने हाथ की मध्यवती, तीन उगलियों-तर्जनी मध्यमा, अनामिका मिलाकर मुख के अन्दर प्रवेश कराकर गलधन्टी अर्थात कौआ से लगाकर थोड़ा आगे पीछे करने से उल्टी आ जायेगी और साथ में पीया हुआ पानी पेट से निकलना शुरू हो जायेगा।

पानी निकलने के समय उंगलियां बाहर निकाल लेनी चाहिये। ताकि पानी एकदम निकल सके। बार बार ऐसा करने के बाद जब पानी निकलना बन्द हो जाये तो इस क्रिया को बन्द कर देना चाहिये। थोड़ा पानी रह भी जाये तो कोई नुकसान नही होगा। इस क्रिया को करने का एक ओर भी तरीका है। जिन लोगों को उंगली डालकर कुंजर करने में असुविधा होती है वह इस क्रिया द्वारा आसानी से कर सकते हैं। पानी पी लेने के बाद रबड़ का एक पतला टयूब जिसे स्टोमक टयूब कहते हैं (यह केमिस्टों के यहां आसानी से मिल जाता है) मुंह के द्वारा

इसे पेट के कुछ भागों में डाल देना चाहिये जिससे ट्यूव द्वारा पानी धीरे धीरे बाहर निकल जायेगा। इस क्रिया को सप्ताह में 2-3 बार कर सकते है। यदि कभी खट्टा पानी या कड़ुवा पानी निकले तो बार बार पानी पीकर क्रिया कर के पेट (अमाशय) साफ कर लेना चाहिये।
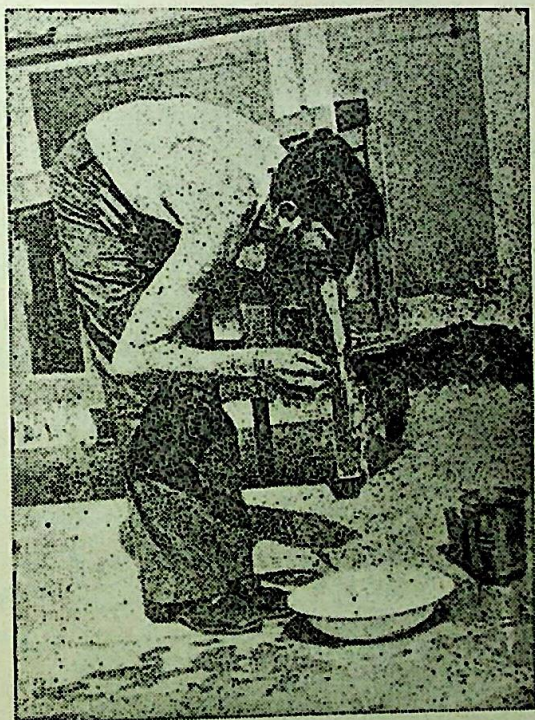
यह क्रिया शौच जाने के वाद सूर्योदय से पहले प्रातःकाल में ही करने का उत्तम समय है। यह कब्ज पित्त –प्रकोप, गैस, सिर दर्द, स्नायु की दुर्बलता, सर्दी जुकाम, खांसी दमा आदि में बहुत लाभ पहुंचाती है। दुर्बल हृदय वालों को यह क्रिया नहीं करनी चाहिये।

# वस्त्र धोती

इस क्रिया को करने के लिये चार उंगल अर्थात तीन इंच चौड़ा तथा पांच गज लम्बा बढ़िया सूती मलमल लेकर साबुन से अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिये। पट्टी को साफ जगह सुखायें जहां मक्खी वगैरा
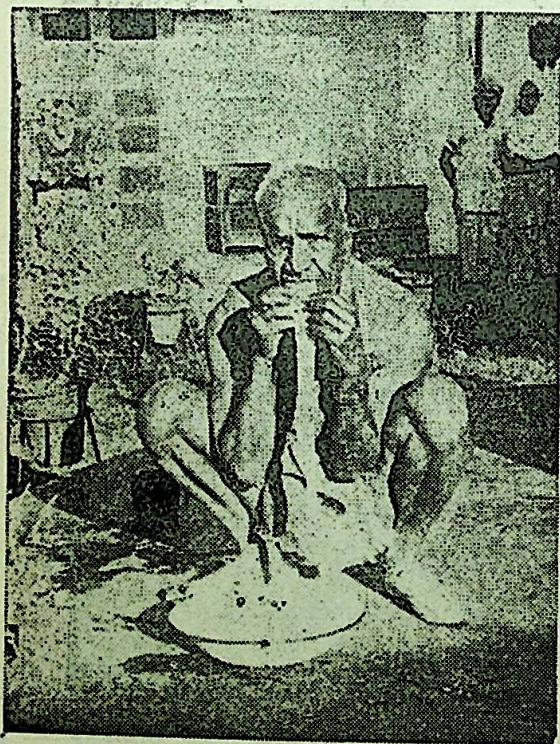
कपडें पर न बैठ सकें। अच्छी तरह सूख जाने के बाद उस पट्टी को गोल

करके लपेट लें और साफ वर्तन में खोलते पानी में उसे डाल दें जो हिस्सा ऊपर हो उसको पानी से बाहर निकालकर उसके अग्र भाग को मोड़ लें तथा मुड़े भाग की चार तय करके दाहिने हाथ की तर्जनी या मध्यमा के बीच उक्त तह की हुई धोती दबाकर मुंह के अन्दर कोए के नीचे रख दें और जीभ की सहायता से उंगलियों को बाहर निकालकर रोटी की तरह अन्दर निगलते जायें ओर प्रतिदिन क्रमानुसार 1/2 फुट निगलने का अभ्यास बढ़ाते जाये। पूरी धोती निगलने में पहले आधा गज धोती मुंह के बाहर रखकर धोती क्रिया करें। इसके पश्चात बैठकर दोनों हाथों से धीरे धीरे बाहर निकालें। कभी किसी कारणवश धोती अटक जायें तो जबरदस्ती कभी न निकाले, अन्दर निगलकर पुनः निकालें। इस क्रिया से सारी धोती निगल जायेगी। जबरदस्ती से धोती रक्त वर्ण होकर निकलती है। इससे साधक घबरा जाता है, किन्तु घबराने का कोई कारण नहीं है। क्योंकि गले की मांसपेशियाँ बहुत मुलायम होती है खींचातानी से नरम पेशियां फट जाती है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि रक्त नालियों के भीतर ही रहता है धोती निकालने के बाद उसमें चिकना लचीला पदार्थ तथा कफ निकलता हैं। उन सबको धोकर पुनः पानी में उबालकर, धोकर, सुखाकर रखना चाहिए। इस क्रिया के अभ्यास से कफ, खांसी, पित्त दूर होते है तथा मनुष्य नीरोग और बलवान हो जाता है। इसके अतिरिक्त इस क्रिया से यह सिद्ध है कि इस क्रिया में खांसी, दमा राजयक्ष्मा, थाईसिस, मंदाग्नि, कब्ज काठमाल, तुतलापन, मलेरिया, ज्वर आदि दूर होते हैं।

कफ सम्बन्धी जितने भी रोग होते है उसके लिये धोती कर्म रामवाण उपचार है? जुकाम, दमा. कब्ज बदहजमी तथा पाचन क्रिया का सुधार होता है। मुंह के छाले ठीक हो जाते है कण्ठ रोग नहीं होते। कुष्ठ जैसे रोग भी नियमित उपयोग से दूर हो जाते है।

# जल नेती क्रिया

इस क्रिया के लिये एक विशेष प्रकार का टोटीदार लोटा या वाल्टी होती है। एक किलो गुनगुने पानी में एक तोला पिसा हुआ नमक मिला लें और काँग आसन में बैठकर उस हल्के गरम नमकीन पानी के पात्र की टोंटी को उस नासिका रन्ध्र में लगायें जिधर से सांस आ जा रही हो अर्थात स्वर चल रहा हो। जिस ओर के छिद्र में टोटी लगी हो उसके सामने की तरफ सिर को यथासाध्य झुकाकर रखें। इस प्रकार झुकते ही नाक के दूसरे छेद में से पानी गिरने लगेगा। इस प्रकार एक छेद से

एक लोटा पानी निकल जाये तो दूसरे छेद से टोंटी लगाकर दूसरा लोटा पानी उसके द्वारा भीतर डालना तथा सिर को दूसरी ओर झुकाकर

सामने वाले छेद से निकालना चाहिए। नाक से पानी निकालते समय मुंह खुला अवश्य छोड़ें और श्वास मुंह से ही लें और छोड़ें। यह सर्दी, जुकाम, दमा, सिरदर्द, नकसीर में बहुत लाभकारी है। इसके अतिरिक्त मस्तिष्क-विकार, विस्मृति पागलपन के लिये भी लाभकारी है।

नोट :—इस क्रिया में नाक से सारा पानी बाहर निकल जाता है। यदि पानी अन्दर रह जाये तो सर्दी, जुकाम होने की सम्भावना रहती हैं तथा सिरदर्द भी हो सकता है। इसलिये जलनेत्री के बाद कपाल-भांति अवश्य करनी चाहिये, और इसके पश्चात् नाक में दो बूंद गाय का शुद्ध घी डालना लाभदायक होता है।

# कपाल भांति

दोनों पैर परस्पर मिलाकर खड़े होकर बांये हाथ की मुट्ठी बांधकर

दाहिने हाथ से उक्त हाथ की कलाई पकड़ते हुये पीछे कमर पर रखें और सामने की ओर झुकते हुये 90° का कोण बनायें।

गर्दन को दांये, बांये, ऊपर, नीचे की ओर घुमाते हुये तीव्र वेग से दोनों नासिका रन्ध्रों से सांस निकालें। इसी प्रकार चारों ओर से लगभग 100 बार यह श्वास क्रिया करें और ध्यान रखें कि कमर या बदन ना हिलायें। सिर्फ गर्दन को ही चारों तरफ हिलायें।

## सूत्र नेती

यह सूत्र की बनी होती है। इसको नाक से डालकर मुंह से निकालते
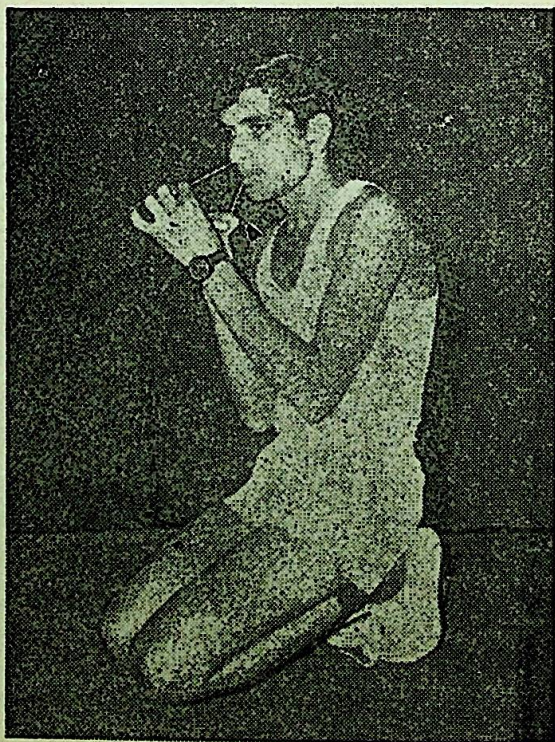
है। पहले सूत्र नेती को नमकीन गरम पानी में डुबोकर बंटे हुये भाग को आगे से अर्ध चन्द्राकार बनाकर कागसन में बंठकर मुड़े हुये अग्रभाग को नासिका के एक छेद में शनैः शनैः प्रवेश करायें। प्रवेश कराने के बाद दाहिने हाथ की मध्यवर्ती दोनों उंगलियां मुंह के भीतर ले जा कर नेती के बंटे हुये भाग को या सिरे को आगे से पकड़कर मुख से बाहर खींच लायें। इसी प्रकार दूसरी नाक में से भी सूत्र नेती को डालकर मुख से बाहर निकालें। दांयी नाक से यह क्रिया करनी चाहिये।

नये सीखने वालों को प्रारम्भ में रबड़—नेती से अभ्यास करना चाहिये जिसे केथेटर कहते हैं। सबसे पतली नली दवाई विक्रेताओं के यहां आसानी से मिल जाती है। साधारण स्वस्थ व्यक्ति भी इसको सप्ताह में दो तीन बार कर सकते हैं। जिनकी आंखें कमजोर हैं, उन्हें एक माह तक रोज इसका प्रयोग करना चाहिये।

सिरदर्द, दृष्टि-क्षीणता, सर्दी—जुकाम, श्वास तथा दमा के लिये यह अति उत्तम क्रिया है। नाक से बढ़ा हुआ मांस या हड्डी बिना आपरेशन के ठीक हो जाती है। सूत्र नेती के प्रयोग करने से पहले कुंजर अथवा जलनेती द्वारा नासारन्ध्रों को सजग कर लेना आवश्यक हैं।

# घृत नेती

यह क्रिया सूत्र नेती के एक दो घण्टे बाद करनी चाहिये। इससे नाक के अन्दर खुश्की नहीं रहती। गाय का घी नाक के लिये एवं मस्तिष्क के लिये बहुत लाभदायक है। इससे पुराने से पुराने सिर दर्द मस्तिक की कमजोरी दूर हो जाती है। स्मरण-शक्ति तथा विचार-शक्ति भी बढ़ती

है। शुद्ध गाय का घी छोटी कटोरी अथवा बड़े चम्मच से गुनगुना करके चित्त लेटे हुये सिर को नीचे लटकाये हुये रूई से या ड्रापर से पांच छः बूंदें नाक के अन्दर डालें और गहरी श्वास खींचें।

## दुग्ध नेती

कागसन में बैठकर तथा जलनेती के समान ही टोंटी वाले पात्र में गाय का ताजा दूध डालकर मुख को थोड़ा ऊपर रखते हुये तथा नाक के छिद्र में टोंटी लगायें और दूसरे छिद्र से अंगूठे या तर्जनी बन्द किये हुये सिर को थोड़ा ऊपर उठायें तो दूध मुख में जाने लगेगा। उसे धीरे धीरे पीते जायें। दूध की मात्रा उतनी ही रहनी चाहिये जो आसानी से हजम हो जाये।

जलनेती के बाद मस्तिष्क को अच्छी तरह साफ कर लेने के बाद
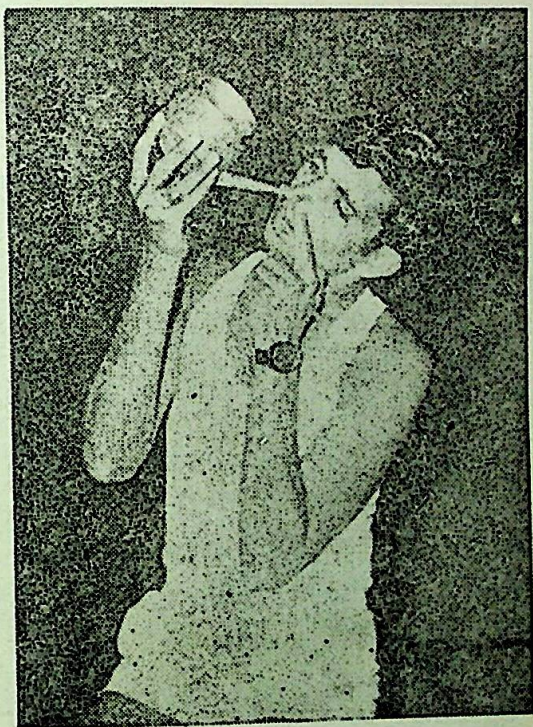
ही दुग्ध नेती करनी चाहिये। आंखों की कमजोरी दूर करने तथा स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिये यह बहुत उपयोगी है।

## शंख–प्रक्षालन

शंख के ऊपर से नीचे तक चक्राकार मार्ग या सुराख होता है। यदि शंख पानी में डाला जाये तो उसी चक्राकार मार्ग से घूमता हुआ वह जल

नीचे तथा बाहर आ जाता है। उसी प्रकार मनुष्य के द्वारा मुख से पिया गया पानी क्रिया से कुछ समय पश्चात आँतों को साफ करता हुआ मल के साथ गुदा द्वारा बाहर निकल आता है। इसलिये इस क्रिया को शंख प्रक्षालन कहते हैं।
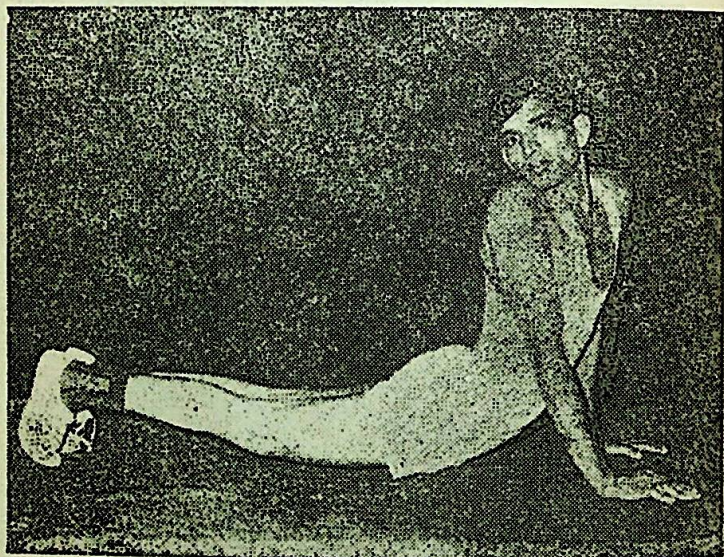
प्राकृतिक चिकित्सा से शंख–प्रक्षालन का व्यवहार कम करके एनिमा द्वारा मल निकला जाता है। परन्तु एनिमा द्वारा सम्पूण मल नहीं निकल पाता। इस कारण शंख-प्रक्षालन द्वारा सशक्त रोगियों को लाभ पहुंचता है। कमजोर रोगियों के लिए यह क्रिया व्यावहारिक नहीं रहती।

शंख–प्रक्षालन क्रिया के लिये पीने लायक सहते हुए गर्म पानी में इतना सैंधा नमक मिलायें जितना कि दाल में डालते हैं और कागासन में

बैठकर यह नमकीन पानी पियें। तत्पश्चात् चित्रानुसार (क) सर्पासन की मुद्रा में क्रमशः दांये बांये चार बार करवट बदलें।

(ख)

(ख) इसके बाद चित्रानुसार हस्तोत्तनासन की मुद्रा में दांये बायें चार २ बार बगल की ओर झुकने का प्रयास करें।

(ग) ऊर्ध्वहस्तोत्तानसन के बाद कटि-चक्रासन की मुद्रा में खड़े होकर दोनों पैरों के बीच एक हाथ का अन्तर हो और दोनों हाथों को

आगे फैलाते हुये दांये ब्रांये मोड़ें। कमर के नीचे के सब अंग यथासम्भव स्थिर रहें। यह क्रिया चार बार बाँयी और बारी-२ से करें। इसे यथासम्भव जल्दी-जल्दी करें क्योंकि यह क्रिया श्वास रोक कर की जाती है।

कटि-चक्रासन के बाद दांये बांये उदारकर्षण करें। अर्थात कागासन में बैठकर बांये पैर के घुटने को नीचे झुकाकर दाहिने पांव की पिंडली या दाहिने पंजे के समीप लाते हुये कमर के ऊपरी भाग को दाहिनी तरफ

मोड़ें और फिर पलटकर उसी प्रकार से दाहिने पैर को घुटने के नीचे झुकाकर, वांये पैर की पिंडली या पंजे के पास लाते हुये कमर के उपरी भाग को बांयी तरफ मोड़ें। ऐसा बारी बारी से चार बार करें।
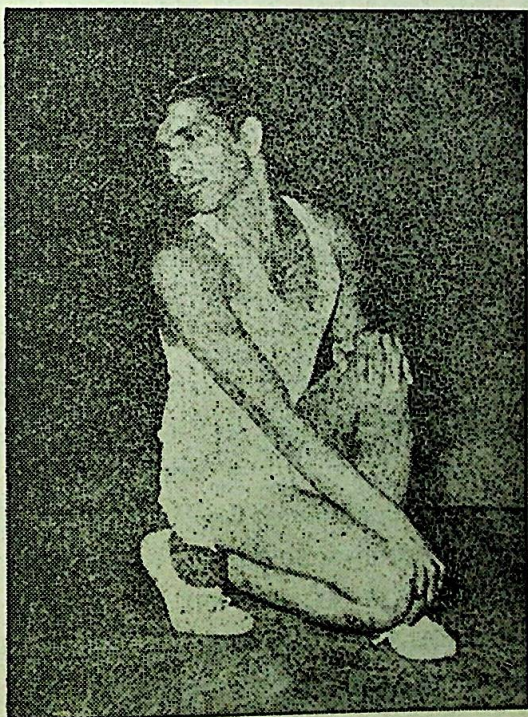
उपरोक्त चारों क्रियाएं चार-चार बार कर चुकने के बाद शौच की हाजत न हो तथा पाखाना ना लगे इसलिए पुनः कागासन में बैठकर एक गिलास नमकीन पानी पिये। उपरोक्त चारों क्रियाओं को उसी क्रम से दोहराएं। दो बार उपरोक्त आसनों का क्रम पूरा करने पर अवश्य शौच

की हाजत हो जाती हैं। किसी किसी को तीसरे और चौथे चक्र में भी पाखाना लग जाता है। इसलिये घबराना नही चाहिये कि शौच की हाजत क्यों नहीं हुई। धैर्य पूर्वक इन क्रियाओं को दोहराते रहने से सफलता अवश्य मिलती है।

थोड़ी सी शंका (हाजत) होने पर सब काम छोड़कर फौरन शौच के लिये जाना चाहिये। इस प्रकार शंख प्रक्षालन करने से पहले गन्दा मल निकलेगा और फिर पतला मल निकलेगा। इसके पश्चात् मलयुक्त जल तथा पीला पानी निकलेगा। शौच से आकर फिर उसी तरह एक गिलास नमकीन पानी पीकर उसी तरह चारों कसरतें करें तो फिर पुन: शौच की हाजत होगी और इस बार सफेद पानी, जैसा मुँह से पिया था वैसा ही गुदा- द्वारा बाहर निकलेगा। सफेद पानी निकलने के बाद बिना नमक का सादा गुनगुना पानी पीकर उल्टी कर देनी चाहिये।

शंख प्रक्षालन की क्रिया करने के तुरन्त बाद ठण्डे पानी से स्नान नहीं करना चाहिये। गर्म पानी से बन्द कमरे में स्नान किया जा सकता है और शंख प्रक्षालन के बाद एक घण्टे के भीतर ही विधिवत भोजन करना आवश्यक है। भोजन में मूंग की खिचड़ी अथवा गेहूं का दलिया ही होना चाहिये जिसमें कम से कम 50 ग्राम शुद्ध देशी घी अवश्य डालना चाहिए खिचड़ी खाने के चार घण्टे बाद अगर भूख लग रही हो तो मुलायम रसदार हल्का फल खा सकते हैं। रात्रि में साधारण भोजन कर सकते हैं। शंख प्रक्षालन के 24 घण्टे तक दूध दही खाना मना हैं।

इसके अभ्यास से सिर के रोग, नेत्र–रोग कर्ण–रोग, नासिका–रोग, लिकोरिया, मासिक दोष, प्रमेह, आतशक आदि रोग ट जाते हैं। इस क्रिया को स्वस्थ पुरुष तथा महिलाओं को महीने में एक बार जरूर करना चाहिये। ऐसा करने से शरीर निरोग रहता है।

# मिट्टी स्नान (*Mud Bath*)

मड-बाथ लेने के लिये एक साढ़े पाँच छः फुट लम्बे गड्ढे की आवश्यकता होती है। गड्ढा पैर की ओर दो फुट गहरा तथा सिर की और कुछ ऊंचा रहे। इसका उपयोग करने से पहले साफ मिट्टी पानी में भिगोकर खुली छोड़कर रखनी चाहिये जिससे हवा के स्पर्श से वह मिट्टी काफी ठण्डी हो जाती है। चार पांच घण्टे बाद भीगी हुई मिट्टी को कीचड़ की तरह बनाकर लेटने की जगह तैयार कर लेनी चाहिये। इस स्नान के लिये प्रात:काल 10–11 बजे का समय या तीसरे पहर 3-4 बजे का समय उपयुक्त होता है। गड्डे में लेटने से पहले रोगी को आसन सूर्य स्नान से गर्म कर लेना चाहिये ताकि मिट्टी की ठण्डक आसानी से सहन की जा सके। लेटने के समय मिट्टी ऊपर न आकर इधर उधर आकर रह जाती है। अपने हाथ से या दूसरे व्यक्ति की सहायता से उस मिट्टी को छाती, पेट तथा पेड़ू पर मोटी तह बनाकर रख देनी चाहिये। केवल मुँह और नाक खुला छोड़कर सारे शरीर को मिट्टी से ढक देना चाहिये। कान के छेदों में रुई लगा लेनी चाहिये जिससे कान के अन्दर मिट्टी न जा सके। उक्त मिट्टी को प्रतिदिन बदलते रहना चाहिये।

स्नायु-दुर्बलता, चर्म-रोग, धातु विकार के कारण शरीर में गर्मी का अनुभव आदि बीमारियों में यह बहुत लाभदायक है। गड्डे की सुविधा न होने पर मिट्टी लेपकर 15–20 मिन्ट धूप में बैठकर भी स्नान करने से खुजली, दाद, शरीर पर एग्जिमा तथा अन्य सभी चर्म रोग ठीक हो जाते हैं।

# विद्युत चिकित्सा

ईन्फरेज किरणें :—

शरीर के किसी भी स्थान पर सेक देने का सबसे उत्तम साधन है ईन्फरेज किरणें। प्राकृतिक चिकित्सा में इसका उपयोग अग्नि-तत्व के अन्तर्गत हम रोग दूर करने के काम में लाते हैं। इसके लिये एक विशेष प्रकार का बल्व लगा होता है। घर में बिजली होने पर इसे आसानी से प्रयोग कर सकते हैं।

ये किरणें अनेक प्रकार के दर्दों, सूजन, गठिया, कान का दर्द, पेट-दर्द, स्त्रियों के मासिक धर्म को खराबी में बहुत लाभकारी है गुर्दे की सूजन, कमर-दर्द, सर्दी–जुकाम, खांसी तथा सभी प्रकार के चर्म रोगों में बहुत लाभ पहुचाती है। जब ये किरणें शरीर की त्वचा द्वारा आत्मसात कर ली जाती हैं तो हमारे शरीर के कोष स्वस्थ और शक्तिशाली बनते हैं।

नोट :—सेंक देते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि चमड़ी न जलने पावे, क्योंकि कुछ रोगों में (लकवा, पोलियो) संवेदन-शक्ति की कमी के कारण चमड़ी जलने की संभावना रहती है । छाती, पेडू, गले, पैर लपेट देने से पहले इसका प्रयोग करना बहुत लाभदायक होता है ।

# हाई फ्रीक्वेन्सी *High Frequency*
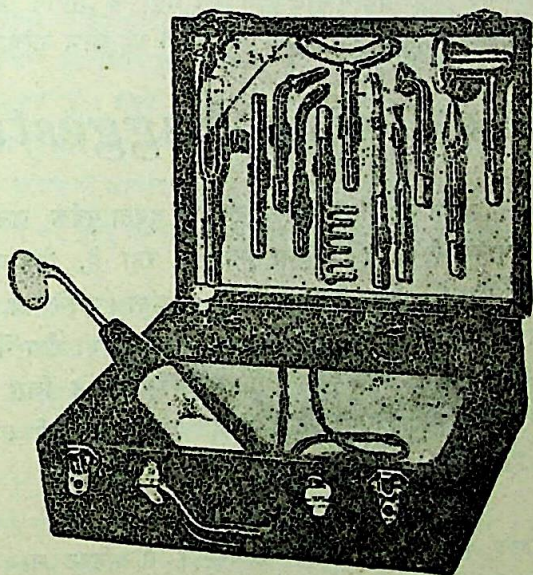
**High Frequency Apparatus**

इसका प्रयोग शरीर में जमा विजातीय द्रव्य पिघलाकर बाहर निकालने में होता है । प्राकृतिक चिकित्सा में रोग का कारण विजातीय द्रव्य माना जाता है । जिस स्थान पर विजातीय द्रव्य जमा हो

जाता है, आधुनिक विज्ञान उसे स्थानीय रोग का नाम देता है जैसे जोड़ों में विजातीय द्रव्य जमने से गठिया, तथा फेफड़ों में जमने से दमा (अस्थमा) का नाम दे दिया जाता है। हाई फीक्वेन्सी का जब प्रयोग किया जाता है तो इसमें शीशे से निकलने वाली चिन्गारी रक्त-सचार में प्रवाह उत्पन्न कर रक्त में विजातीय द्रव्य का दवाव कम कर देती है।

यह जोड़ों के दर्द, नसों और मांसपेशियों के दर्द में लाभ करता है रीढ़ की हड्डी पर इसका प्रयोग नींद लाने और नसों के तनाव को दूर करने में तथा मृगी और हिस्टीरिया के दौरे में भी यह लाभ पहुंचाता है।

## शुभ चिन्तन (*Atuo Suggestion*)

अपने निश्चेतन मन में स्वास्थ्य भावना को दृढ़ता पूर्वक जमा देना ही स्वकल्प भावना है। मेरा रोग कम होता जा रहा है, दिन प्रतिदिन मैं अच्छा हो रहा हूं। मैं जल्दी ही अच्छा हो जाऊंगा। अपने मन ही मन ऐसी बातों को बार बार दोहराना आवश्यक है। किसी भी रोग में इसके प्रयोग से आश्चर्य–जनक लाभ मिलता हैं। बुरे विचारों से जिस प्रकार विभिन्न रोग पैदा होते हैं उसी प्रकार अच्छे विचारों से कई तरह के रोग ठीक हो सकते हैं।

स्वास्थ्य और इच्छा–शक्ति का परस्पर से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इच्छा–शक्ति कर्तव्य और प्रेरणा की जननी मानी जाती है । इस लिये मनुष्य चाहे तो अपनी प्रबल इच्छा द्वारा दीर्घकाल तक अपने स्वास्थ्य को उन्नत रख सकता है । बीमार को अक्सर यह विश्वास दिलाया जाता है कि चिन्ता मत कीजिये, शीघ्र आरोग्य होगा। असाध्य से असाध्य रोगियों को देखकर भी चिकित्सक उसे निराश नहीं करते, उसे शीघ्र ही अच्छा करने का आश्वासन देते हे। इस प्रकार का आश्वासन

व्यर्थ नहीं जाता । उससे मरीज की मन; स्थिति पर वड़ा चमत्कारी प्रभाव पड़ता है और यदि उसकी मनोदशा अनुकुल बनी रही तो कुछ ही समय में वह आरोग्य लाभ करने लगता है ।

पाश्चात्य देशों में अब शुभ चिन्तन द्वारा रोगों का उपचार किया जाने लगा है । उपचार करने वाले डाक्टरों का कहना है कि यदि मनुष्य अपनी इच्छा शक्ति द्वारा अपने हृदय पर नियन्त्रण रखे और दृढ़ता से किसी प्रकार की शिथिलता न आने दे तो वह अनेक प्रकार के रोगों से बच सकता है । इसके विपरीत जिन लोगों की इच्छाशक्ति दुर्बल हो जाती हैं और जो निराशावादी के चक्कर में पड़कर खिन्न बने रहते है, वे साधारण से साधारण रोग से भी इतने भयभीत हो चुकते हैं कि उससे रोग दूर होने की बजाय और उग्र रूप धारण कर लेता है ।

जब कोई बीमार यह कल्पना करता है कि उसका रोग असाध्य हो गया है और वह उससे छुटकारा नहीं पा सकता तो दशा सुधरने की बजाय बिगड़ती जाती है । उस समय डाक्टर के इलाज का प्रभाव बिल्कुल व्यर्थ जाता है । इसलिये रोग के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की कल्पना करना अथवा उस पर अपनी राय कायम करना ठीक नहीं है । इससे रोगी अपने भविष्य और परिवार के लिए चिन्तित हो उठता है । चिन्ता से उसके जीवन पर घातक प्रभाव पड़ता है । चिन्ता उसकी इच्छा शक्ति को नष्ट कर देती है और उसे सारा संसार फीका मालूम पड़ने लगता है । इस कारण इस स्नायविक शक्ति का विकास बन्द हो जाता है और रोगी अपनी विचारशक्ति खो बैठता है ।

पिछले दिनों जर्मन पत्रिका में एक लेख प्रकाशित हुआ था । इसमें कई चिकित्सा विज्ञानिकों के अनुभव सार रूप में छपे थे । लेख में कहां गया था कि शरीर के विभिन्न अंगों में होने वाली पीड़ा, वेदना, आदि के लिये

जितने कारण शरीर में विद्यमान होते हैं, उससे कहीं अधिक मानसिक कारण इसके लिये उतरदायी होते है।

डा० जूलियस ने अपने कुछ प्रयोगों का विवरण लिखते हुये कहा है कि एक बार मैंने केवल डिस्टिल वाटर की सूई लगाकर रोगी को यह बताया कि उसे गहरी नींद की दवा दी गयी है। वह कई दिनो से अस्पाताल में ठीक नींद नहीं ले पा रहा था सुई लगाने के 10-15 मिनट बाद जब मैं उधर से निकला तो मैंने देखा कि वह गहरी नींद ले रहा हैं। एक दूसरे रोगी जिसे भी यही शिकायत थी नींद लाने वाली तेज औषिधी दी गयी और उससे कहा गया कि थोड़ी देर में नींद आ जावेगी और तुम्हारा दर्द हल्का पड़ जावेगा। यह सन्देह पैदा करने के बाद रोगी को नींद नहीं आयी और वह पूर्ववत दर्द की शिकायत करता रहा। इस प्रयोग के बाद उन्हीं दवाओं के विपरीत निर्देश देकर उसके दूसरे परिणाम बताकर दिया गया तो देखने में आया कि पहले से भिन्न प्रतिक्रिया हुई। पहले दिन पानी का इन्जेक्शन साधारण दवा बताकर लगाया गया तो उससे दर्द कम हुआ और न ही रोगी को नींद आयी। इसके साथ दूसरे रोगो को नींद लाने का आश्वासन दिया तो गहरी नीद आयी इन प्रयोगों के आधार पर डा० जूलियस ने यह निष्कर्ष निकाला कि दवायें जितना परिणाम उत्पन्न करती है उनसे कहीं अधिक प्रभाव उसके सम्बन्ध में मान्यताओं का होता है।

इसके साथ ही यह भी एक तथ्य है कि एक ही तरह के दर्द को भिन्न भिन्न मन स्थिति के लोग अलग अलग तरह से अनुभव करते है। डरपोक किस्म के रोगी किसी प्रकार के दर्द के कारण बुरी तरह चीखते है। मध्यम मन स्थिति वाले मात्र हलके हलके कराहते रहते है लेकिन साहसी लोग उसी कष्ट को बहुत हलका मानते है युद्ध के मोर्चे पर घायल सिपाही अपनी बहादुरी की मान्यता के आवेश में कम कष्ट

अनुभव करते हैं। जबकि उतने ही घाव लगने पर अन्य कई गुना अधिक कष्ट अनुभव करते हैं।

भावनात्मक तनाव ही कई बार दर्द, में परिवर्तित हो जाता है। सिर दर्द, पेट दर्द, जोड़ों का दर्द, छाती का दर्द, कमर का दर्द आदि दर्द में शारीरिक कारणों से अधिक मनोविज्ञानिक कारण उत्तरदायी होते हैं। इसके मूल में कोई चिन्ता, आंशंका अथवा भूतकाल की कोई दुखर्द स्मृति काम करती है। मन की यह अवस्था शरीर के किन्हीं भी अंगों पर आच्छादित होकर उन्हें पीड़ा का अनुभव कराती है।

यजुर्वेद संहिता में एक मन्त्र है जिसका चौथा पद है "तन्मे मनःशिव-संकल्पमस्तु" अर्थात मेरे मन का संकल्प शिव हो। मन के शुभ विचारों से सब प्रकार के घाव भर जाते हैं। जैसे वर्षा के जल से अकाल ग्रस्त क्षेत्र नन्दन वन की तरह लहराते हैं वैसे ही मन की शक्ति से एकाग्रता, प्रसन्नता और शान्ति प्राप्त होती है। अमरीकी लेखक स्वेट मार्डन ने कहा है—यदि आप अस्वस्थ विचारों को मन में स्थान देंगे तो शरीर पर उनका बुरा प्रभाव पड़े बगैर नहीं रहेगा। जैसा बिम्ब होगा वैसा प्रति-बिम्ब होगा।

बिहार में एक महिला गठिया रोग से पीड़ित थी वह चल फिर नहीं सकतीं थी। एक दिन बिहार में भूकम्प आया। वह महिला इस तरह दौड़ी कि लोग आश्चर्य में पड़ गये। इसी तरह एक लड़की जिसको एक माह से टाईफाईड था और कमजोरी के कारण चल फिर नहीं सकती थी एक दिन घर के सभी सदस्य निचले कमरे में खाना खाने चले गये और उस लड़की के पास कोई न रहा। उसी समय छत पर अचानक बन्दर आ गया तो वह लड़की डर के मारे नीचे कमरे में भाग गयी। इसी प्रकार एक एक सज्जन स्वास्थ्य के परीक्षण के लिये दिल्ली के किसी बड़े होस्पीटल में गये। वहां उनका ठीक तरह से परीक्षण कर लिया गया। परन्तु रिपोर्ट एक दो दिन में भेजने के लिये कहा गया। परन्तु क्लर्क की गल्ती

से किसी दूसरे मरीज को रिपोर्ट उनके पास पहुंच गयी। उनको जो रिपोर्ट गई उसमें लिखा था कि आपका हृदय बहुत कमजोर हो गया है और ब्लड शुगर भी अधिक है। उस रिपोर्ट को पढ़कर उसने हृदय की धड़कन देखी, उसको धड़कन काफी महसूस हुई और वह अपने आपको बीमार समझकर बिस्तर पर लेट गया। दूसरे दिन गम्भीर बीमार होने पर डाक्टर को बुलाया गया। डाक्टर उनको देखकर हैरान हो गया। उसने कहा कल तक तो आप ठीक थे, अब क्या हो गया। उन्होंने जब अपनी रिपोर्ट डाक्टर को दिखायी तो डाक्टर ने किसी दूसरे की रिपोर्ट गल्ती से उनके पास पहुंच जाने के लिये माफी मांगी। यह सुनकर कुछ ही घण्टों में वह बीमार बिल्कुल ठीक हो गया।

हमारे अनेक रोग कल्पित होते हैं। कल्पित रोगों से पीड़ित रहने वालों की संख्या वास्तविक रोगों से पीड़ित रहने वालों की संख्या की अपेक्षा अधिक होती है। बहुत से वास्तविक रोगों की जड़ मन में होती हैं। मन शुद्ध हो जाने पर रोग अपने आप समाप्त हो जाता है।

मानसिक और शारीरिक प्रक्रियाओं को अलग अलग मानना एक भूल है। जैसे हाथ पैर शरीर के अभिन्न अंग हैं। उसी प्रकार दिमाग बहुत महत्वपूर्ण अंग हैं काफी हद तक शारीरिक व्याधियां दिमाग को प्रभावित करती हैं और मानसिक विकार भी शारीरिक दोष के रूप में प्रकट होते हैं। जैसे खुशी में दिल की धड़कनें बढ़ जाती हैं, परेशान होने पर पसीना आ जाता है, उत्तेजित होने पर रोंगटे खड़े हो जाते हैं, डरे हुये व्यक्ति की न केवल धड़कन बढ़ती है बल्कि मुंह भी सूख जाता है तथा पेशाब की हाजत हो जाती है, इसी तरह से शारीरिक विकार जैसे बदहज़मी होने पर कुछ भी करने को दिल नहीं करता बल्कि आप चिड़चिड़े हो जाते हैं। हर बीमारी को समझने व उपचार करने से पहले दोनो पहलुओं पर ध्यान रखें।

मानसिक संतुलन विपरीत परिस्थिति के वास्तविक एवं काल्पनिक घटनाक्रमों के सहारे ही चलता है। यह व्यक्ति की भावुकता या सम्वेदन-शीलता पर निर्भर करता है कि वह उसे मजाक में टाल देता है, या भयभीत होकर अपना सन्तुलन खो बैठता है। यदि व्यक्ति डरपोक प्रकृति का और अतिभावुक है तो इसके लिये छोटी घटना भी बहुत बड़ी हो सकती है और वह नन्ही सी अशुभ कल्पना से भी तिलमिला कर उद्विग्न हो सकता है। इस प्रकार परिस्थितियों का आघात सर्व प्रथम और सम्पूर्ण रूप में मानसिक संस्थान को प्रभावित करता है। ज्वर, सिर दर्द आदि की स्थिति में शरीर असहाय बन जाता है, उसे कुछ करते नहीं बनता, बेचैनी सताती है और मानसिक संन्तुलन इससे भी बुरी स्थिति पैदा कर देता है क्योंकि शरीर पूरी तरह मन के नियन्त्रण से चलता है। रक्त मांस से नहीं, अपितु मन के निदेशों से शरीर की गाड़ी चलती है।

यही कारण है कि मन के विकृत होने पर शरीर का स्वास्थ्य बना रहना असम्भव हो जाता है। इस प्रकार का स्वास्थ्य संकट अमुक घटना या अमुक परिस्थिति के कारण उत्पन्न होगा, इसका सब पर लागू होने का कोई सिद्धान्त नहीं है। कहा जा चुका है कि एक ही घटना की अनेक व्यक्तियों पर परस्पर विरोधी प्रतिक्रियायें हो सकती हैं। घटनाओं को रोका नहीं जा सकता और उत्पन्न होने वाली परिस्थितियों से बचा नही जा सकता। इस लिये स्वस्थ रहने का एक मात्र यही तरीका है कि सोचने समझने का सही तरीका अपनाया जाये, परिस्थितियों से तालमेल बिठाने की कला सीखी जाय और अपनी चिन्तात्मक दुर्बलता के कारण उत्पन्न होने वाली ऐसी स्थितियों से बचा जाय जो व्यक्ति के जीवनक्रम को तहस नहस और अस्त व्यस्त कर देती है।

किन्हीं अप्रिय अथवा अवांछनीय घटनाओं से शारीरिक व मानसिक स्थितियों में हल्की सी उद्विग्नता बढ़ जाती है। यह उद्विग्नता, व्यक्ति की अपनी स्थिति के अनुसार कम ज्यादा हो सकती है । इस स्थिति को खीज-तनाव, परेशानी कुछ भी कहा जा सकता है। कमजोर मन-स्थिति वाले व्यक्ति साधारण सी बातों को लेकर इतने परेशान हो उठते हैं कि उनके मन पर कई समस्याएं एक साथ चढ़ जाती है और सभी जल्दी जल्दी अपने सम्बन्ध में विचार किये जाने की मांग करती है। इस धमा चौकड़ी में अधूरी एकांकी वाली समझ ही काम करती है और उससे कोई निश्कर्ष निकालना तो दूर रहा उल्टे सिर चकराने लगता है। प्रतीत होता है कि मानो उलझनों के घटाटोप चढ़ आये हैं। इन विचारों के हुड़दंग को रोकना चाहिये और एक समय में एक विचार को अपनाकर बारी-बारी शान्तचित्त से प्रस्तुत सयस्याओ पर विचार करना चाहिये। इस तरह आसानी से चिन्त का बोझ हल्का किया जा सकता है।

रोग की जड़ शरीर में नहीं मन में होती है, यह मानकर मानसिक संतुलन को सुस्थिर रखा जाय तो कोई शारीरिक रोग होने पर भी वह जीवन क्रम सामन्य ढंग चलाया जा सकता है। मानसिक संतुलन सुधारने के लिये यही मान्यता बड़ी ही उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

वर्तमान अनेक महान् चिकित्सकों का भी यही मत है कि हमारा स्वास्थ्य और हमारी बीमारियां अधिकतर हमारी मानसिक अवस्थाओं का बाहरी प्रतिरूप हैं। अनेक बार यह देखने में आता है कि किसी संवेगात्मक चरम स्थिति में हृदयगति तीव्र अथवा मध्यम हो जाती है। ऐसी ही कुछ अवस्था अत्यधिक भय के कारण भी हो जाया करती है। संवेगात्मक दबाव विशेषतः क्रोध की स्थिति में शरीर के जोड़ों के आस-पास एक विशेष रासायनिक तत्व एकत्रित करने लगता है । चिन्ता, भय; क्रोध, प्रतिस्पर्धा इत्यादि मन की अन्य विभिन्न स्थितियां हैं।

ये ही वस्तुतः हमारे शारीरिक कष्टों के अदृश्य कारण हैं। हमारे विचार ही हमारे ऊपर शासन करते हैं। यह इस बात पर निर्भर करती है कि हम अपनी नाव किस प्रकार चलाते हैं और इस नाव के चालक भी विचारों के रूप में हम ही हैं। कोई बाहरी शक्ति नहीं। इस प्रकार विचार ही हमें रोगी या स्वस्थ बनाते हैं। नीचे कुछ बातें उस महान् विज्ञान से जिसे 'सायकोसोमेटिक' या 'मानसिक औषधियों से जाना जाता है दी जा रही है।

1 डर के विचार घबड़ाहट पैदा करते हैं।

2 क्रोध के विचार सिरदर्द व ज्वर पैदा करते हैं।

3 घृणा के विचार उदर रोग पैदा करते हैं।

4 परेशानी के अस्पष्ट विचार फेफड़े के रोग पैदा करते हैं।

5 हीनता के विचार रक्त की कमी के कारण बनते हैं।

6 छोटी छोटी बातों में व्यर्थ के चिड़चिड़ेपन से गले के रोग पैदा होते हैं।

7 अशुभ व बुरे विचार रक्तचाप व कैन्सर पैदा करते हैं।

8 बन्धन के विचार लकवे का कारण बनते हैं।

3 स्नेह के विचारों से शरीर में उल्लास की वृद्धि होती है।

10 संकल्प शक्ति से नये कार्य करने के अवसर नित्य आते हैं।

11 उदार वृत्ति से जीवन में सभी कुछ भरा पूरा रहता है।

12 शक्ति के विचारों से विजय-प्राप्ति होती है।

हम विंचारो से नये कर्म–बन्धनो को बनाते हैं और उन्हीं से उन्हें समाप्त भी कर सकते हैं। भौतिकी के न्यूटन के नियम जिस प्रकार स्थूल जगत में सत्य हैं उसी प्रकार सूक्ष्म जगत में भी। हर क्रिया का फल होता ही हैं। विचारशक्ति का ज्ञान ही हमें अपने दुःख दर्द कम करने में सहायता करता है। स्थूल जगत में तो हम विचारों के करिश्मे नित्य देखते ही हैं। ठीक इसी प्रकार यदि हम अपने को सूक्ष्म लोकों के पदार्थों से भी सम्बन्ध रक्खें तो हम और भी स्थायी व महान् सहायता-कार्य कर सकते हैं जैसे अदृश्य सहायता के कार्य आदि। इसके लिये प्रथम हमें स्थूल जगत में अपने को दक्ष करना होगा ताकि सहायता का प्रत्येक अवसर पूरा हो, खाली न जाये। किन्तु इसके पूर्व कि आप दूसरे की सहायता करें, स्वयं की ही चिकित्सा करें जैसे कि

1 अपना हर निर्णय स्वयं ही लें।

2 आशावादी बनें। हर वस्तु को तथा पहलू को अच्छे दृष्टिकोण से ही देखें। कार्य चालू होने से पूर्व ही सफलता के स्वप्न देखना तुरन्त बन्द करें।

3 सदैव ही हर व्यक्ति व हर दशा में भलाई व सुन्दरता का ही दर्शन पायें। ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं जिसमें भलाई व बुराई दोनों ही न विद्यमान हों।

4 सदैव स्वस्थ रहने की, सुख एवं सफलता की ही चर्चा करें।

5 घरेलू मामलों में विशेष उदारतापूर्ण दूसरों की बढाई करने का व उत्साहपूर्वक दृष्टिकोण रक्खें।

6 अपने में सभ्यता, सहिष्णुता एवं कर्तव्यपरायणता को उत्पन्न करें

7 भूतकाल की चिन्ता को छोड़कर प्रसन्नता पूर्वक नवीन पथ पर अग्रसर हों।

## 8 स्वयं पर पूर्ण विश्वास रक्खें। आप समर्थ हैं।

फ्रांस में एक डाक्टर ने नये ढंग का चिकित्सालय खोला है। उस चिकित्सालय में रोगियों को निश्चित समय पर इकट्ठा होना पड़ता है। सभी के आ जाने पर सभी एक साथ, एक स्वर में चिल्ला उठते हैं कि मेरा रोग छुट गया है, मैं चंगा हो गया हूं, मेरे शरीर में शक्ति आ गयी है। इसके वाद उन्हें हंसने के लिये कहा जाता है। इससे रक्त में एक प्रकार की जीवन शक्ति का स्रोत बह जाता है और इसके वाद वे अपने आप को बहुत अच्छा अनुभव करते हैं। इस अस्पताल में प्रसन्नचित्त रहना ही प्रधान चिकित्सा है।

प्रसन्न रहने से चित्त शान्त और चिन्ता रहित रहता है। सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक हेलीबर्टन साहब का कथन है कि प्रसन्न चित्त रहना तन्दुरस्ती है और उदास रहना बीमारी है। प्रसन्नचित्त रहने वाले मनुष्य के लिये संसार की सभी वाते आनन्द और मनोरंजन की बातें बन जाती हैं। जो जितना अधिक खुलकर हंसता है वह उतना ही अधिक नीरोग और दीर्घ जीवी बनता है। इस लिये अवकाश के समय में जी खोलकर हंसिये और दूसरों को भी हंसाइये। इससे संसार की अनेकानेक कठिनाईयों पर सुगमता के साथ विजय प्राप्त की जा सकती है, सुख समृद्धि की वृद्धि होती है। दूर मत जाईये ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधान मंत्री चर्चिल की मिसाल ले लीजिये। युद्ध का असीम भार होते हुये भी वह सदैव मुस्काराते रहते थे और माथे पर परेशानी की एक भी शिकन नहीं आने देते थे। सच बात तो यह है कि प्रसन्नता असन्तोष का निवारण करती है और चिन्ता को मार भगाती है।

साधारण स्वास्थ मनुष्य ही अधिक प्रसन्न पाये जाते है। इस लिये प्रसन्नता और तन्दरुस्ती का चोली दामन का सा साथ है। हंसने की आदत

डालना प्रसन्नता को निमन्त्रण देना है । इसलिये हंसना सीखिये और तन्दुरुस्त बनिये । एकाकी होकर चिन्तामग्न होना ठीक नहीं । खाली समय बर्बाद करने की बजाय अपने आपको किसी काम में लगाये रहना कहीं अच्छा है । घूमिये, फिरिये, प्राकृतिक दृश्यों का अवलोकन कीजिये । स्वस्थ रहने के लिये प्राकृतिक नियमों का पालन करने में सदैव तत्पर रहिये । खान–पान और इन्द्रियों के संयम आदि में सावधानी बरतीइये । इच्छा शक्ति को सही तरीके से प्रयोग में लाइये । आप देखोगे कि इन बातों का फल आपके स्वास्थ्य एवं दीर्घ–जीवन के सम्बन्ध में अनुकुल ही सिद्ध होगा ।

इस तरह यह एक उचित बात होगी, अगर हम उपचार के साथ मानसिक स्थिति का अध्ययन करें और सन्तुलित रखने का प्रयास करें । इससे रोगी को ठीक होने में सहायता मिलती हैं । अगर इसका ख्याल न रखा जाये तो कई बार अच्छा इलाज होने पर भी रोगी स्वास्थ्य का अनुभव नहीं करता ।

# उपवास

उपवास प्राकृतिक चिकित्सा में कारगर उपाय है । आयुर्वेद से इसे त्रिदोष नाशक कहा गया है ।

"वमनं कफ याशक, बात नाशाय मर्दनम् ।
स्नेहन (नेहन) नित–नाशाय, सर्व नाशाय तथअम् ।

उपवास ही महा औषध है । सब रोगों का मूल कारण शरीर में सडा हुआ मल है जो आहार–विहार की गलतियों के कारण शरीर में इकट्ठा होता रहता है । यह मल शरीर के लिये हानिकारक व विजातीत होता है । फल स्वरुप अनेक रोग उत्पन्न होते है । इन विकारों को दूर करने के लिये पूरी पाचन प्रणाली को आराम देना चाहिए । आराम देने का अर्थ है :–उपवास

उपवास रोगों के उपचार की वैज्ञानिक विधि हैं जिसमें रोगी कम या अधिक समय तक नीबू-पानी-शहद को छोड़कर किसी प्रकार का ठोस अथवा तरल आहार ग्रहण नहीं करता। उपवास एक रोगनिवारक पद्धति है। उपवास करना बहुत सरल है। केवल आपको इरादा करने की आवश्यकता है। एक दो दिन भोजन छोड़ने से कोई हानि नहीं होती तीन से अधिक दिन का उपवास किसी अनुभवी चिकित्सक की देखरेख में करना चाहिये। एक सप्ताह के उपवास से अनेक निराश रोगियों को जिन्हें किसी भी इलाज से लाभ नहीं पहुंचता था, आश्चर्यजनक लाभ हुआ और सबसे बड़ी बात यह है कि इसमें कुछ भी खर्च नहीं होता।

जब हम बीमार पड़ते हैं तो खाने की इच्छा अपने आप ही नहीं होती यह बात सत्य है कि बीमार पड़ने पर पशु खुद अपना खाना बन्द कर देते है। इससे क्या यह सिद्ध नहीं होता कि रोग की स्थिति में प्रकृति भोजन का निषेध कर देती है और निर्देश देती कि हमें अस्वस्थ होने पर सचमुच उपवास करना चाहिये।

उपवास प्राचीनतम चिकित्सा पद्धति है। पशु के लिये यह एक सहज प्रवृत्ति है। आज भी पालतु पशु इस उपचार का व्यवहा करते हैं। उदाहरण के लिये कहें कि जब पालतु पशु जैसे बिल्ली को चोट लग जाती है अथवा बीमार हो जाती है तो वह खाना छोड़ देती है। चिकित्सा के क्षेत्र में इसका खूब उपयोग होता रहा है पर जबसे लक्षण दबाने वाली दवाईयां चली हैं तब से इसका प्रचलन घट गया है। इसका कारण यह है कि उपवास और चिकित्सा दोनों परस्पर विरोधी हैं। पर समय–समय पर उपवास की उपयोगिता सामने आती रहती है। इस दिशा से रूस के अनेक केन्द्रों में अनुसंधान कार्य हो रहा है। वहां के डाक्टर अनोखिन का मत है कि चिकित्सा के क्षेत्र में उपवास से बडी सम्भावनायें हैं। हमारी विकृत शिक्षा, मिथ्या तर्क प्रणाली, भ्रामक

औषधि शिक्षा ही हमें वास्तविक स्थिति समझने और उसके अनुसार कार्य करने से रोकती है।

उपवास करने से पूर्व शरीर को उपवास करने के लिये तैयार करने की आवश्यकता होती है। इसके लिये उपवास से एक दिन पहले हल्का प्रोटीन युक्त भोजन करना चाहिये जो खनिज लवणों से भरपूर हो। उपवास से पहले या इसके दौरान कब्ज अवरोधक एनिमा लेना लाभ–प्रद होता है।

उपवास के प्रारम्भ में हमें एक दो दिन कुछ कठिनाई मालूम होती है। प्रत्येक खाने के समय आदत वाली भूख लग जाती है; और प्रत्येक दिन यह धीरे धीरे कम होने लगती है। उपवासकाल में कुछ प्रति-क्रियायें भी हो सकती हैं जैसे मुँह में कड़वाहट, अरुचि, जीभ पर सफेदी का जम जाना, उल्टियां आना, पेट में दर्द होना, बैठकर उठते समय चक्कर आना, हिचकियां आना, इत्यदि। यह लक्षण देखकर घबराना नहीं चाहिये। यह विकार शरीर से बाहर निकलने के कारण होते हैं अतः इन्हें लाभकारी समझना चाहिये। उपवास कितने समय तक करना चाहिये, यह एक विवादास्पद प्रश्न है। उत्तम सलाह तो यह है कि उपवास उस समय समाप्त कर देना चाहिये जब इसके लाभदायक प्रभाव दृष्टिगोचर होने लगें। तथा उपरोक्त प्रतिक्रियायें समाप्त हो जावें, मुँह का स्वाद ठीक हो जावे, जीभ का रंग लाल हो जावे, चेहरे पर निखार आ जावे, शरीर से हलकापन व स्फूर्ति अनुभव हो, सात्विक आहार की इच्छा हो। यानी जब तक वास्तविक भूख न लौट आये तब तक खाने को मन नहीं करता। जो शक्ति हमारे भोजन हजम करने में लगी रहती है वह उपवास काल में बीमारी दूर करने में लगी रहती है। बहुत से रोग जिनका निदान करना भी कठिन होता है लम्बे उपवास के समय अपने आप सामने आ जाते हैं। लम्बा उपवास बीमार शरीर के सारे दुर्बल स्थलों को समाने लाता है और उन सारे अवयवों से पर्दा

उठा देता है। रोग के बहुत से लक्षण जिन्हे रोगी स्वयं भी याद नहीं रख पाता, उपवास उन्हें याद दिला देता है। कई बीमारियां ऐसी होती हैं जो लम्बे उवपास से ही कावू आती हैं। वे बीमारियां हैं गठिया, उपदंश, दमा, मोटापा, मिरगी, लीवर की खराबी कैन्सर। ऐसे रोग छोटे छोटे उपवास की वजाय लम्बे उपवास द्वारा जल्दी अच्छे हो जाते हैं। उपवास की अवधि का निर्णय करना रोगी की स्थिति पर अधारित होता है।

सब प्रकार के ज्वर, आकस्मिक पीड़ायें, मधुमेह सन्धिवात, गठिया, उपदेश, दमा, मोटापा, यकृत अवरोध, एपेन्डीसाईटिस, कैन्सर, यर्बुद, अतिसार, सिर दर्द, त्वचा रोग, पायरिया, सर्दी जुकाम, क्रमिरोग; टांसिल बढना, चेचक, डिप्थीरिया, नशे की आदत, प्रमेह, ब्लडप्रेसर स्वप्न दोष, अपच तथा अनिन्द्रा रोगों में उपवास से अवश्य लाभ होता है।

कुछ ऐसी अवस्थाये हैं जिनमें उपवास की सलाह नहीं दी जा सकती। इन अवस्थाओं में उपवास करना असम्भव भी होत्ता है। अधिक दुर्वलता में हृदय रोग की बढ़ी हुई हालत में, कैन्सर बहुमूत्र और पुरानी तपेदिक में उपवास से कुछ लाभ नहीं हो सकता। जिनको उपवास से अधिक भय लगता हो उनको अच्छा है उपवास न कराया जाये। गर्भवती स्त्रियों को केवल विशेष अवस्था पड़ने पर ही उपवास रखना चाहिये।

उपवास शान्ति पूर्ण वातावरण में करना चाहिये। उपवास में सहानुभूति रखने वाले व्यक्तियों से सम्पर्क रखना चाहिये। उपवास में सबसे बड़ी बाधा उपवास के विपरीत वातावरण है जैसे घर के कुछ लोग उपवास करने पर बहस प्रारम्भ कर देते हैं और उसे भोजन करने के लिये वाध्य करते हैं। वे लोग उसे पागल बतलाते हैं। उपवास के

लिये सबसे उत्तम स्थान वे प्राकृतिक चिकित्सा की संस्थायें हैं जहां उपवास करने में नियमित रूप से, रोगियों की गतिविधियों को ध्यान में रखा जाता है।

उपवासकाल में श्वासप्रक्रिया में बहुत सुधार होता है। इसका आश्चर्यजनक प्रभाव दमा के रोगियों पर देखा गया है। उपवास काल में निष्कासन की क्रिया सरल हो जाती है, शरीर के सभी बहिष्कार मार्ग स्वयं को विषैले द्रव्यों, बेकार पदार्थों, रोगी तन्तुओं और अतिरिक्त आहार से मुक्त कर लेते हैं। इससे हृदय को बहुत लाभ होता है और उपवास में नये तन्तुओं का निर्माण होता है एवं शुद्ध रक्त से इसकी कार्य प्रणाली में सुधार होता है। गुर्दों में उपवास के कारण चर्बी कम हो जाती है, जिससे उनकी कार्य क्षमता बढ़ती है। चमड़ी को ताजगी प्राप्त होती है। लाल कणों के बढ़ने से रक्त की रोगों से लडने की शक्ति में वृद्धि होतो है। उपवास से मस्तिष्क की शक्ति में भी वृद्धि होती है, स्मरण शक्ति व नेत्र ज्योति भी बढ़ती है।

उपवासकाल में शरीर का वजन अवश्य कम होता है परन्तु इससे शरीर पर कोई दुष्प्रभाव नहीं होता है। उपवास करना बहुत सरल है परन्तु उसको तोड़ने में बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है। उपवास तोड़ने के लिये सर्वप्रथम जल मिले फलों का रस, उसके बाद केवल फल का रस प्रयोग करें और इसके बाद भूख के अनुसार कच्ची तरकारियां फल, उबली सब्जियां लेकर धीरे धीरे दलिया, रोटी सब्जी पर आना चाहिये।

## सावधानियां :–

1 उपवासकाल में आवश्यक पानी अवश्य पियें। यदि आवश्यक समझें तो गुनागुना पानी में कागजी नीबू तथा थोड़ा शहद मिलाकर लिया जा सकता है।

2. उपवासकाल में आंतें अपना स्वाभाविक कार्य एक तरह से बन्द कर देती हैं। अतः उन्हें नित्य प्रति ठण्डा या गुनगुना पानी का एनिमा लेकर साफ करते रहना चाहिये।

3. उपवास के दिनों में मूत्र भी अधिक लाल हो जाता है क्यों कि शरीर में संचित मल मिल जाता हैं। अतः इन दिनों अवश्य ही एनिमा लेकर इन विषों को साफ करना बहुत आवश्यक हैं।

4 उपवासकाल में शरीर की त्वचा को स्वच्छ रखने के लिये प्रति दिन गीले तोलिये से शरीर को अच्छी तरह रगड़कर नहाना चाहिये। यदि सम्भव हो धूप स्नान भी लिया जा सकता है।

5 उपवास काल में अक्सर उभाड़ आते हैं। कभी कभी रोग उग्र मालूम पड़ता है। इसमें किसी प्रकार की औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

6 उपवासकाल में मानसिक सन्तुलन कायम रखने के लिये ईश्वरोपासना में मन लगाना चाहिये।

7 उपवासकाल में शरीर को पूरा आराम देना चाहिये। उन दिनों टहलने जैसे हलका व्यायाम करना चाहिये।

## रसोपवास :–

नारंगी, नींबू, मौसमी, अनार, अंगूर आदि अनेक रसीले फलों का सेवन करते हुये उपवास किया जा सकता है। फलों से उपलब्ध खनिज लवण सफ़ाई प्रक्रिया में बहुत सहायक होते हैं। फलों का रस अधिक न लेकर, दिन में दो तीन बार ही लेना चाहिये। नीबू का रस शरीर के शोधन में बहुत उपयोगी होता है।

पुराने रोगों में जिनमें रोगी की पाचनशक्ति वहुत कमजोर होती है अथवा कमज़ोर रोगी, जो उपवास नहीं कर सकते उन्हें रसाहार से रोग की खराबी निकल जाने का मौका मिलता है। रसाहार में फलों को चूसकर खाना पाचन की दृष्टि से उत्तम है। सिर्फ फलों और सब्जियों का सूप तीन–तीन घण्टों में लेना चाहिये। फलों के रस में सन्तरा, मीठा नीबू, अनार, सेब, नाशपाती, अंगूर, अनानास,, टमाटर इत्यादि का रस निकाल सकते हैं। इन फलों के अभाव में गरम पानी में किशमिश भिगोकर, उनका रस निकाल कर काम में ला सकते हैं। नारियल का पानी भी वहुत लाभदायक है।

मंहगे फल की बजाय ताजा गाजर या टमाटर का रस या सब्जियों के सूप से भी रसाहार का लाभ मिल सकता है। थोड़ा श्रम करने वाले, या बिल्कुल शारीरिक श्रम न करने वाले लोगों के लिये, रसाहार बहुत लाभदायक होता है। रसाहार से पेठ भी भर जाता है और साथ ही दवा का काम भी करता है। फल और सब्जियों में प्रकृति ने बहुत गुण छोड़ रखे है। कमजोरी की हालत में रसाहार के साथ शहद भी दो तीन बार ली जा सकती है रसाहार उपवास का ही रूप है। इसलिये रसाहार में उपवास की तरह अधिक से अधिक आराम करने का ध्यान रखना चाहिये।

मंदाग्नि, बदहजमी, पेचिश पेट में भारीपन, गठिया, कब्ज, सिरदर्द आदि रोगों में बहुत लाभदायक रहता है।

सब्जियों का सूप तैयार करने के लिये हरी पत्तियों वाली सब्जियां जैसे एक गिलास सूप बनवाने के लिये एक पाव पालक या मूली की पत्ती, हरा धनिया बारीक काट हुआ 50 ग्राम, गाजर, टमाटर, टिन्डा आदि को बारीक काटकर एक पाव पानी में डालकर कुकर में पकाना चाहिये। पक चुकने के बाद इन उबली सब्जियों को मसलकर कपड़े में छानकर

रस निकाल लें और नीबू डालकर बहुत स्वादिष्ट हो जाता है। बहुत से रोग शरीर में खनिज लवणों का कमी से होते है, इन हरी सब्जियों के सूर के उपयोग से शीघ्र लाभ होता है।

# फलाहार

फल ही मनुष्य का प्राकृतिक भोजन है। अप्रकृतिक भोजन से ही मनुष्य बीमार होता है और उसका निवारण फलो से किया जा सकता है। बड़े बड़े डाक्टरों का विचार है कि पूर्ण आरोग्य प्राप्त करने के लिये विना आग पर पकाये हुये और विना मिर्च-मसाले, नमक लगाये फल आवश्यक हैं। डाक्टर जस्ट ने अपनी पुस्तक में लिखा है "दवा के कड़वे घूंट में लोग राहत खोजते हैं जबकि मनुष्य के रोगों और कष्टों की दवा फलों में मौजूद है। प्रकृति मनुष्य को ऐसी अमूल्य दवा प्रदान करती है जो खाने में स्वादिष्ट भी लगती है और उनके कष्टों तथा रोगों को निश्चयात्मक रूप में हरती है। फलों में स्वर्गीय अमृत भरा होता है। मनुष्य ऐसे स्वादु अमृत का त्याग करता है और उसकी बजाय जहरीली दवाईयों को क्यों अपने गले के नीचे उतारता है ?"

प्रकृति ने मनुष्य को न मांसाहारी बनाया है और न ही अन्नाहारी, वास्तव में वह फलाहारी ही है परन्तु जीभ के शासन ने इस बुद्धिमान मनुष्य को अपने भोजन का स्वाद अनेक उपायों से बढ़ाने की हिक्मत ढूंढने की ओर प्रवृत्त किया और इसमें वह इतना सफल हुआ कि उसके द्वारा पाक शास्त्र नामक एक विज्ञान की सृष्टि हो गयी, जिसके अनुसार यदि भोजन तैयार कराया जाए तो शायद सवेरे से लेकर शाम तक पेट-पूजा के अतिरिक्त मनुष्य को दूसरे कामों के लिये अवकाश ही न मिले। मानव जीवन का विज्ञान नामक पुस्तक में डाक्टर ग्रेहम महोदय कहते हैं :-

"यदि मानव प्रकृति की सर्वोत्तम और सर्वोत्कृष्ट अवस्था का ख्याल किया जाय तो यह एक व्यापक सिद्धान्त के रूप में गृहीत किया जा सकता है कि आग की सहायता से भोजन का कृत्रिमता पूर्ण परिपाक मनुष्य शरीर के वैज्ञानिक तथा मनो-वैज्ञानिक हितों के प्रति कुछ मात्रा में व्यघातकारी है"। डाक्टर ग्रैहम अनेक दृष्टियों से भी बिना पकाया हुआ आर्थिक मात्रा में खाने की सुफ़ारिश करते हैं, उनका कहना है कि उस अवस्था में मनुष्य अपने दांतों का उपयोग अधिक करेगा जिससे पाचन क्रिया को समुचित कार्य करने योग्य अधिक सैलिवा की उत्पत्ति हो सकेगी। फलों को स्वतन्त्र आहार के रूप में उपयोग करने से बहुत लाभ हो सकते हैं। फलों में जो नमक विद्यमान रहता है, वह भूख की वृद्धि करता है। सैलिवा (मुंह के अन्दर रहने वाला दव्य पदार्थ) का प्रवाह उत्तेजित करके वह पाचन क्रिया में सहायक होता है। पाचन क्रिया को तेज करने वाले उदर के भीतर पहुंचते है तब जिगर आंतड़ियों की गांठों और पेशियों से द्रव्य पदार्थ उत्पन्न होता है, रक्त पर भी उनका यथेष्ट प्रभाव पड़ता है। फलो में हर पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं। यदि मनुष्य इन प्राकृतिक खाद्य (फलो) पर संतुष्ट रहे तो कभी बीमार ही नहीं होगा, बल्कि अप्राकृकित खाद्य के सेवन से जो रोग उत्पन्न होते हैं उनका निवारण भी फलों से किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में फल और मेवे खाद्य भी हैं और दवा भी हैं।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार भोजन में पोषक तथा स्वास्थ्यवर्धक तत्वों, विटामिनों की कमी के कारण भी कई प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं जो केवल स्वास्थ्य प्रदान करने वाले विटामिन केवल ताजे फलो व कच्ची सब्जियों द्वारा प्राप्त करके मनुष्य स्वस्थ हो सकते हैं।

प्रकृति माता हमेशा स्वास्थ्य रक्षा के लिये आवश्यक खाद्य वस्तुयें, फल समय समय पर उत्पन्न करती है। प्रकृति की ओर से जलवायु में परिवर्तन के अनुसार अलग अलग समय पर भिन्न भिन्न फल उत्पन्न करने के रहस्य को समझने का प्रयत्न करें तो मनुष्य प्रकृति माता की कृपा से जीवन भर स्वस्थ रह सकता है। जिस प्रकार प्रत्येक डा० के नाम के साथ लिखा होता है आई स्पेशलिस्ट (नेत्र रोग विशेषज्ञ) इन नामों का अभिप्राय विश्वसनीय वस्तु की ओर जनता को आकृष्ट करना होता है। ठीक इसी प्रकार समस्त फल मेवों पर प्राकृति के उदार कर कमलो द्वारा स्थापित स्पेशलिस्ट और उसके विशेष गुण प्रकट करने वाला बोर्ड भी लगा होता है, किन्तु पढने के लिये चक्षु दृष्टि के साथ साथ विवेक दृष्टि की भी आवश्यकता है। जैसे अखरोट का आकार हमारे मस्तिष्क जैसा है और उसके अन्दर की मीगी मस्तिष्क के अन्दर की बनावट के समान है अखरोट मस्तिष्क की दुर्बलता का विश्वास-नीय इलाज है। इसी प्रकार बादाम की आकृति हमारे दिल और आंखों के आकार से मिलती है और बादाम दिल तथा आंखों के रोग के लिये बहुत उपयोगी है। इसी प्रकार पपीते का आकार हमारे अमाशय (पेट) के लिये बहुत लाभकारी माना जाता है। इसी प्रकार लौंग का आकार हमारी दाढ के अकार से मिलती है और अक्सर दाढ़ के दर्द में आपने देखा होगा लौंग के तेल का उपयोग किया जाता है। इसी प्रकार दांतों का आकार अनार फल के दानों से मिलता है और दांतों के लिये अनार अचूक औषधी मानी जाती है। यही प्रकृति के गुप्त संकेत हैं और यही बोर्ड है। इसी प्रकार और फलों का निर्णय भी किया जा सकता है।

## निम्न रोगों में निम्न फलों का उपयोग करना चाहिये :-

गाजर :- नेत्र रोग, दन्त रोग, हड्डी के रोग

टमाटर :– मधुमेह, खून की कमी

मूली :- गुरदे की पथरी, मासिक धर्म के विकार

अदरक :– पेट की गैस, वात रोग

पालक :- कब्ज, खून की कमी

सलाद की पत्ती :– मानसिक एवं नाड़ी विकार

शहद :– साधारण कमजोरी, खांसी, जुकाम, दमा, गठिया, ब्लड प्रेशर

अंगूर :- फेफड़ों के रोग, जिगर, कैन्सर

अनार :– बवासीर, प्रदर, दांतों के रोग

नींबू :– हृदय रोग, चर्म रोग

लहसुन :– गठिया, ब्लड प्रेशर

पपीता :– अजीर्ण, अमाशय के रोग

अनानास :- गले के रोग

दूध :- अल्सर, पेट का फोड़ा

फटे दूध का पानी :- बुखार

बादाम :- हृदय रोग, आंखों के रोग

अखरोट :- दिमागी कमजोरी

लौंग :- दांतों के दर्द

फलाहार के लिये जो फल खाये जाते हैं वह ताजे पके हुये होने चाहियें। यह ख्याल करना बिल्कुल गल्त है कि अंगूर, सेब, अनार, आदि महंगे फल ही अच्छे होते है हर मौसम में मिलने वाले फल उतने अच्छे नहीं होते वल्कि सस्ते फल अधिक लाभदायक होते हैं। जिस मौसम में जिस जलवायु में जो फल उत्पन्न होते हैं उनको उपयोग में लाना चाहिए कहा जाता है कि जो वस्तु जितनी अधिक उपयोगी होती हैं वह प्रकृति की ओर से उतनी सुलभ होती हैं, जैसे मनुष्य को जिन्दा रहने के लिये हवा सबसे अधिक आवश्यक है। इसके बगैर मनुष्य एक घण्टा भी जिन्दा नही रह सकता। इसलिये यह प्रकृति की ओर से बिना कुछ खर्च किये आसानी से मिल सकती है, दूसरी आवश्यक वस्तुओं में पानी हैं जो आसानी से मिल जाता है। इसी तरह जो फल मनुष्य को मौसस और जलवायु के अनुरुप होते हैं वह बाजार में सस्ते मिल जाते हैं। और महंगे फलों की बजाय मौसमी सस्ते फलों का उपयोग करना चाहिये। जो फल उपयोग किये जायें वह ताजे और पके होने चाहियें। उनका चुनाव रोगी की हालत और रोग को दृष्टि में रख कर करना चाहिये।

## फलाहार चिकित्सा के लिये फल खातें समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

1 एक बार में एक ही प्रकार का फल खाना चाहिये।

2 रोटी के साथ फलों का उपयोग ठीक नहीं है, फलों का संयोग दूध के साथ होता है। रोटी के ऊपर फल खाने से फल अपना असर नहीं दिखा पाते।

3 फल दिन में तीन वार ही खाना चाहिये प्रात: नाश्ते में, दोपहर को भोजन के समय, शाम को तीसरी वार। वार वार फल खाने से रोग बढ़ जाता है।

4 फलाहार के समय सादे पानी का एनिमा आवश्यकता महसूस होने पर अवश्य लेना चाहिये। मामूली जीर्ण रोग तीन चार सप्ताह के फलाहार और एनिमा प्रयोग के से निश्चय लाभ होता है।

# सलाद (कचूम्बर)

सलाद अंग्रेजी का शब्द है। इसका मतलब है कच्ची चाट अर्थात विना आग पर पकाई हुई सब्जी जैसे टमाटर, खीरा, ककड़ी, चुकन्दर फूल गोभी, पालक, धनिया की पत्तियां, मूली एवं शाक सब्जीयों को ज्यादातर लोग पकाकर खाते हैं किन्तु पकाई हुई सब्जियों में सबसे बड़ी कि पकाते समय उनके विटामिन नष्ट हो जाते है। अत: इनको पकाना खरावी है। इनकी जान लेना है। इनमें तीन चार सब्जियों को पतला काट कर एक साथ मिलाकर सलाद बन जाता है। इसमें हल्का और नीबू भी डालना चाहिये। पुराने रोगों में सलाद तथा स्वस्थ अवस्था में भी सलाद अवश्य खाना चाहिये क्योकि इसमें प्राकृतिक लवण कैलशियम, फासफोरस, लोहा और आयोडीन आदि लवण शरीर में नये तन्तु, रक्त निर्माण में बहुत आवश्यक है।

## प्रश्न रोगी :–प्राकृतिक चिकित्सा क्या है ?

उत्तर डा०:—प्राकृतिक चिकित्सा में वगैर किसी औषधी का उपयोग किये केवल, उपवास. फलाहार, सन्तुलित भोजन, जल चिकित्सा, सूर्य (सूर्य किरण चिकित्सा) विजली, यौगिक क्रियाओं, व्यायाम, मालिश, आदि साधनों द्वारा रोगों को जड़से दूर किया जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा मानती है कि रोग का कारण गलत, रहन-सहन, अहार विहार, से होते है। रोग निवारण के लिये उक्त कारणों को हटा देने से रोग दूर हो जाते है।

प्राकृतिक चिकित्सा इलाज की सार्वभौम पद्धति है। उसका कार्य क्षेत्र आंशिक नहीं है । प्राकृतिक जीवन समझने की क्षमता जितनी अधिक हम में होगी उतनी ही गहराई से हम प्राकृतिक चिकित्सा समझ पायेगें। प्राकृतिक चिकित्सा प्राकृतिक जीवन की ओर लौटने और उसके तालमेल में रहकर रोगमुक्त होने का प्रयास है। अज्ञानवश हम अति लम्वे समय से प्रकृति के नियमों के प्रतिकूल जीवन बिताते रहे हैं। कारण कोई भी हो अपने नियमों की अवहेलना करने पर दण्ड के रूप में रोग का जन्म होता हैं, और व्यक्ति बीमारियों का कष्ट भोगता रहता है। अब हम फिर प्राकृतिक चिकित्सा को अपनाकर प्रकृति की ओर लौट रहे है और हम सार्वभौम नियमों के सम्मुख आत्म समपर्ण कर रहे है । इसके द्वारा हमारा प्रयास यह रहता है कि हम अपने खोये हुये स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर लें।

शरीर का संचालन करने वाली एक शक्ति, है जिसका उद्देश्य सही अर्थ में स्वास्थ्य की उपलब्धि है। प्राकृतिक चिकित्सा की यह मान्यता है कि शरीर में रोगमुक्त करने की अन्तर्निष्ट शक्ति विद्यमान है। किसी रोग से छुटकारा दिलाने का स्वयं शरीर की यही शक्ति करती है। और जो भी चिकित्सा दी जाती है उसका लक्ष्य शरीर के रोग

मुक्त के आत्म प्रयास में उसकी सहायता देना मात्र होता है। जहां तक प्राकृतिक चिकित्सा की वात है। दूसरी वात यह है कि इसमें सबसे महत्वपूर्ण भूमिका स्वयं रोगी की होती है। यदि रोगी किसी प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र में चिकित्सा करा रहा हो तो वहां भी रोगी की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण होती है। भोजन सम्वन्धी, उपवास सम्वन्धी अर्थात शरीर के सार सम्भाल सम्वन्धी जो आदेश रोगी को दिये जाते है. उनके अनुसार ईमानदारी पूर्ण आचरण का भार रोगी पर होता है, यदि रोगी उसका पालन ठीक ठीक नहीं करता तो चिकित्सा से पूरा लाभ नहीं मिल सकेगा।

प्राकृतिक चिकित्सा रोगोपचार की एक ऐसी पद्धति है जिसमें उपचार की सफलता रोगी और चिकित्सक के परस्पर सहयोग पर निर्भर है यहां कोई अमुक दवा या अमुक बूटी खाने की बात नहीं। अन्य सभी चिकित्सा पद्धतियों में स्वास्थ्यार्थी का रोल निष्क्रियता होता है। उसे मात्र डाक्टर द्वारा वताई गयी दवा लेनी होती है। या डाक्टर उसे जो उपचार, दे उसे लेना मात्र होता है। पर प्राकृतिक चिकित्सा की शरण में आने वाले स्वास्थ्यार्थी को तो सव कुछ उसे ही करना होता है। दूसरे शब्दों में एक वार प्राकृतिक चिकित्सा करा लेने पर मनुष्य जीवन भर सुखी रहने की कला हस्तगत कर सकता है, एवं दूसरो को भी स्वस्थ रहने की कला का ज्ञान करा सकता है। मनुष्य रोगी वनकर प्राकृतिक चिकित्सालय में आता है और योगी वनकर निकलता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में हम मानसिक शक्ति की ओर भी पूरा ध्यान देकर, भौतिक स्तर पर शरीर का उपचार करते हैं। इस प्रकार

एक निश्चित स्थिति में शरीर और मन का तालमेल भी ठीक बैठ जाता है, और उस स्थिति को प्राकृतिक चिकित्सा में सच्चा स्वास्थ्य कहते है।

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में अन्य चिकित्सा पद्धतियों की तरह किसी प्रकार की औषधियों का उपयोग नहीं किया जाता है। इस लिये इस चिकित्सा का औषधियो से कोई सम्बन्ध नही है। इसका सीधा सा कारण यह है कि दवा कोई भी हो, उसके प्रयोग का उपदेश रोग के लक्षणों को दबाना होता है। जो कारण रोग के प्रकट होने में हुये उन पर जरा भी ध्यान न देना। दवा की ओर दृष्टि केन्द्रित रहने पर रोगी को इस बात का मोका ही नहीं मिलता कि रोग का वास्तविक कारण स्वयं रोगी के अन्दर खान पान और रहन-सहन की बुरी आदतों और विचार के गलत तरीके मौजूद हैं। और उसका आगे आचार विचार कैसा रहे, इस सम्बन्ध में उसका मार्ग प्रदर्शन नहीं किया जाता, जिससे वह शरीर का रोग उत्पन्न होने से रोक सके।

इस प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली को दोहरा काम करना पड़ता है। जहां तक रोगी का सम्बन्ध है, प्राकृतिक चिकित्सा का पहला कार्य है रोगी को शीघ्र से शीघ्र रोगमुक्त करना लेकिन दूसरा कार्य (जो अधिक महत्वपूर्ण है) उसे यह सिखाना कि अब वह किस प्रकार जीवन यापन करे कि अपने को स्वास्थ्य और रोग से मुक्त रख सके। किसी भी चिकित्सा पद्धति में इस प्रकार को दोहरा कार्य नहीं किया जाता।

## प्रश्न रोगी :– क्या प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा स्वास्थ्य लाभ होने में समय अधिक लगता है ?

उत्तर :—डा० :–संसार प्रसिद्ध डाक्टर लिण्डहार से प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली की आलोचना करते हुये उनके किसी विरोधी ने कहा "प्राकृतिक चिकित्सा से तो रोगी बहुत देर में अच्छे होते हैं, यहां तक कि तबीयत उक्ता जाती है। डाक्टर लिण्डहार ने छूटते ही कहा–बिल्कुल नहीं, प्राकृतिक चिकित्सा से रोगी बहुत जल्द अच्छे हो जाते है। इतना ही नहीं संसार में जितनी चिकित्सा पद्धतियां आजकल प्रचलित है, प्राकृतिक चिकित्सा उन सब में सबसे तेज रफ्तार वाली चिकित्सा है। पर हमारी परेशानी तो यह है कि हम को सिर्फ असाध्य रोग के रोगी जब सब तरफ से निराश हो जाते है, और मरने के करीब होते है तब डूबते को तिनके का सहारा लेने हेतू प्रकृति की शरण ग्रहण करते है, उस समय वह सिर्फ रोग से ग्रस्त ही नहीं होते बरन दवाओ का भी जहर शरीर में होता है। इस तरह प्राकृतिक चिकित्सा को रोग का ही इलाज नहीं करना पड़ता, बल्कि उन दवाओं के विषों को भी उनके शरीर से निकालना पड़ता है जिसमें महिनों से लेकर सालों लग सकते है। इसके अतिरिक्त इस प्रणाली में रोग अच्छा होने का मतलब सिर्फ रोग का दूर होना नहीं बल्कि नव जीवन प्राप्त करना, पूर्ण रूप से तन्दुरुस्त, मजबूत और शक्तिशाली होना भी है। मान लीजिये कोई दस वर्षो से दमा रोग से पीड़ित है और वह रोगी दस वर्ष में लगातार सभी प्रकार के इलाज ऐलोपेथी, आयुर्वेदिक, यूनानी, होमीयोपेथी करा चुका है। जब कहीं से आराम नहीं आया तो वह निराश होकर प्राकृतिक चिकित्सा की ओर आता है, यदि प्राकृतिक चिकित्सा उसे दो तीन माह में स्वास्थ्य लाभ दे तो आप ही विचार करे कि प्राकृतिक चिकित्सा में समय अधिक लगता है या कम ? प्राकृतिक चिकित्सा के लिये अन्य चिकित्साओं से रिजेक्ट रोगी ही आते हैं। अत: ऐसे रोगियों के उपचार में समय लगना आवश्यक है।

प्राकृतिक चिकित्सा मानव शरीर पर कैसे काम करती है, इससे सर्वथा अनभिज्ञ लोग ही इस प्रकार की बातें करते है। यह एक आम बात है कि साधारण आदमी बिना छानबीन किये अनायास कुछ चीजों की निन्दा करता है। वर्तमान पीढ़ी के लिये यह अत्यन्त दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति है।

पर, तथ्य यह है कि जहां नियमित भोजन और सही आदतों द्वारा शरीर में प्रतिक्रिया तीव्र प्राकृतिक चिकित्सा का प्रतिफल भी बड़ा ही तेज गति वाला होता है। प्राकृतिक चिकित्सा रोग का इलाज जड़ से करती है। उसके फलस्वरूप आदमी का स्वास्थ्य अच्छा होता है, उसमें उत्साह वृद्धि होती है और भविष्य में फिर रूग्ण होने के अवसर ही समाप्त हो जाते हैं। रोगमुक्त रखने की दो प्रवृतियां प्राकृतिक चिकित्सा की है, और दोनों ही स्पष्ट है। प्राकृतिक चिकित्सा व्यक्ति को पूर्णतः रोगमुक्त करती है, इस बात को रोगी ध्यान में रखे, आपको प्राकृतिक चिकित्सा तेज प्रभावी नजर आने लगेगी।

दवा से रोग मुक्त होने का मतलब है आज के कष्ट को भविष्य में पुनः अपने पूर्व रुप में अथवा नया वेश बनाकर और विकराल रूप में सर उठाने का निमंत्रण देना। अथवा दवा खाने से रोग चक्र सदा चलता रहेगा। क्योकि दवा शरीर को रोगमुक्त करने वाली शक्ति को बढ़ावा नहीं देती और नियमित दवा खाते रहने से हमारी पांचन शक्ति भी बराबर क्षीण होती चली जाती है। मैल को किसी बर्तन में ढ़कना और रोगी को दवा देना एक सा काम है। प्राकृतिक चिकित्सा में रोग को या कहिये विजातीय द्रव्य को दबाया नहीं जाता, बल्कि उसे खोद खोद कर निकाला जाता है। हम स्वयं सोच सकते हैं कि कि कूड़े को ढकने और साफ करने में समय का अन्तर अवश्य होना चाहिये अतः यह कहना कि प्राकृतिक चिकित्सा में समय अधिक लगता है, केवल भ्रम मात्र है।

राममूर्ति हिन्दुस्तान के एक वहुत बहुत ही शक्तिशाली पुरुष हुये र।उन्होंने अपनी शक्ति के प्रदर्शन द्वारा वहुत सा धन कमाया । लोग कहते हैं कि वह अपनी छाती पर हाथी खड़ा कर लेते थे। एक बार जव उन्होंने 10 मन का पत्थर उठा लिया तो कालेज के कुछ लड़कों ने उनकी शक्ति का रहस्य पूछा । राममूर्ति ने उत्तर दिया मैंने कभी नहीं किया कि जव मन हुआ तो कोई भारी चीज उठा ली पर मैंने यह किया कि जो भी मैं आसानी से उठा सकता था, वह दिन में कई बार नियम से उठाता रहा, और वजन की शक्ति वढ़ती गयी। रायमूर्ति कोई वहुत लम्वे चौड़े आदमी नहीं थे वे बचपन में वहुत कमजोर थे और वीमार रहते थे । पर शक्ति प्राप्त करने की चाह उनमें अधिक थी और उन्होंने इसे प्राप्त किया। यह शक्ति उन्होंने कड़ी मेहनत करके प्राप्त नहीं की परन्तु जो कसरते वे आसानी से कर सकते थे उन्हें वे नियम से करते रहे।

यही सब कामों के साथ होता है । परन्तु कठिनाई यह है कि हम समय नहीं लगाना चाहते और स्वस्थ होने के लिये या इच्छित फल पाने के लिये धीरज नहीं रखते । हम जानते हैं कि स्वास्थ्य वर्षों के गलत रहन सहन के कारण खराव होता है, पर हम कुछ सप्ताहों में या महीनों में ही इसे ठीक करना चाहते हैं। पर यदि इससे अधिक समय लगे और अधिक प्रयत्न करना पड़े तो भी निराश होने की जगह कहां हैं ?

डा० का टिलड़न का मत है कि रोग भी एक विकास है। वह न छूतछात का परिणाम है और न ही वाहर से आकर शरीर में घर करता रोग का विकास और विनाश धीरे धीरे ही होता है। रोग के चिन्ह प्रकट होते ही यह नहीं समझ लेना चाहिये कि रोग उसी वक्त हुआ है जबकि उसके चिन्ह प्रकट हुये बल्कि वह वहुत पहले शरीर में घर कर चुका होता है। इसी तरह रोग का चिन्ह मिट जाने से यह

समझना भी गलत है कि रोग अच्छा हो गया है। रोग अच्छा होने में फिर भी देर हो सकती है और होती है। उसके बाद ही रोग का बीज नष्ट होता है।

जिस जीर्ण रोग को अपना रूप प्राप्त करने में वर्षों के गलत रहन सहन) का समयं लगा है उससे मुक्ति पाने में जल्द बाजी क्यों ? जिस रोग को जीवन भर गलत रहन सहन से व्यक्ति ने खरीदा हैं, उसका मूल्य चुकाने में व्यक्ति को सभी कार्य पूरे करने होंगे जिसकी अपेक्षा स्वास्थ्य लाभ के लिये है। जब तक व्यक्ति अपने गलत रहन सहन में काम करता रहेगा रोग से मुक्ति में देर होती जावेगी पूर्णतया स्वस्थ न हो सकेगा। सच्चे स्वास्थ्य लाभ के लिये शरीर में विषाक्त तत्व जमा करने वाले और उसके फल स्वरुप रोग उत्पन्न करने वाले कर्मों को छोड़ना होगा।

हमें यह भी समझ लेना चाहिये कि रोगी का स्वास्थ्य लाभ करना विपरीत दशा में घड़ी की सूई चलाने के समान है। उसमें जितने भी समय की अपेक्षा होगी उतना समय लगाना ही होगा। जब व्यक्ति सही रहन सहन और खानपान अपनायेगा तो उसके सामने दो कार्य होंगे, पहला खानपान और रहन सहन से शरीर में आयी त्रुटियो का निवारण और स्वस्थ तथा पुष्ट कौशिकाओं का निर्माण। इन दोनों क्रियायों की पूर्णता पर ही व्यक्ति को सही अर्थों में स्वस्थ कहा जा सकेगा। उदारहण के लिये शराब पीने वाला अत्यल्प मात्रा में शराब पीता है फिर बढ़ते बढ़ते वह शराब का आदि बन जाता है, और मदात्यका शिकार हो जाता हैं। अब आप भली भांति समझ सकते है कि १०-१5 वर्ष जो शराब पीता आया है, क्या उसका कष्ट 5-10 दिन या सप्ताह में कोई दवा मिटा सकती हैं ? ऐसे व्यक्ति को पुनः उत्साह और स्वास्थ्य में लाने के लिये समय चाहिये ओर उस समय के लिये कतराना स्वास्थ्य लाभ के लिये उपेक्षा करना है।

## प्रश्न रोगी :-प्राकृतिक चिकित्सा से कोन कोन से रोंगों में स्वास्थ्य लाभ हो सकता है ?

उत्तर :–डा० प्राकृतिक चिकित्सा में सभी प्रकार के रोग ठीक हो सकते हैं। वास्तव में इस चिकित्सा पद्धति में चिकित्सा रोग की नहीं अपितु रोगी की होती है। जिस प्रकार हम अपनी साईकिल, स्कूटर की सर्विस कराते हैं तो वह एकदम नया हो जाता है। इसी प्रकार इस चिकित्सा में रोगी के शरीर की सर्विस यानी ओवर आईलिंग होती है। प्राकृतिक चिकित्सा का बुनियादी सिद्धान्त यह है कि सब प्रकार के रोगों का एक ही कारण है शरीर के भीतर जमा हुआ कूडा (विजातीय द्रव्य) या जो वाहरी पदार्थ हमारे शरीर यन्त्र द्वारा हजम नही किये जाते और न ही मल मूत्र या पसीने श्वास द्वारा बाहर निकल पाते हैं वे कूड़े के रुप में शरीर यन्त्र के अन्दर जमा हो जाते हैं। ऐसे पदार्थ शरीर का हिस्सा नही वन पाते और निर्जीव होकर शरीर के भीतर अंगों से पृथक हो जाते है परन्तु किन्हीं कारणों से शरीर इन्हें वाहर नहीं धकेल पाता, और कूडे की तह जमती जती है।

महर्षि चरक से उनके शिष्यों ने प्रश्न किया कि आपने सभी रोगों के पृथक पृथक कारण वतला दिये परन्तु सभी का मुख्य कारण क्या है यह हम सब जानने के इच्छुक है। उन्होंने शिष्यों के इस प्रश्न का उत्तर दिया।

रोगाः सर्वेऽपिमन्देग्नौ सुतारामुदराणि च।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्जायन्तेमलसंचयात् ॥

अर्थात् सम्पूर्ण रोगों का कारण मल संचय ही है। मल संचय के वारे में प्राकृतिक चिकित्सा का कहना है कि हमारे शरीर में जो मल उत्पन्न हो जाते हैं उसे बाहर निकालने के माध्यम है, मल, मूत्र, त्वचा, और फैफड़े। जब इनमें सक्रियता कुछ कम हो जाती है, अथवा गलत

रहन सहन द्वारा इतना मल इकट्ठा हो जाता है कि शरीर उसे न निकाल फैंक सके तो जुकाम, बुखार, फोड़े, फुन्सी आदि अनेक प्रकार के तीव्र रोग हो जाते हैं।

इस प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा में कोई रोग असाध्य नहीं होता क्योंकि प्रत्येक रोग की जड़ शरीर में उपस्थित विजातीय द्रव्य है, जो समय पाकर रोग विशेष द्वारा निकल जाने का प्रयत्न करता है। प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोगों द्वारा रोग दूर हो जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा की मान्यता है कि रोग का सही और मूल कारण पोषण और (न्यूट्रिशन) तथा विजातीय द्रव्य निष्कासन (एलीमिनेशन) के बीच असन्तुलन है। यदि हम सचमुच स्वास्थ्य लाभ चाहते हैं तो पूरे शरीर को इकाई मानना होगा। ऐसा नहीं कि शरीर अपने निजि अस्तित्व वाले ऐसे अंगो का जोड़ है, जो बिना एक दूसरे से सम्बन्ध रखे स्वतन्त्र रूप से काम करते हों। प्राकृतिक चिकित्सा रोगों की एकता में आस्था रखती है जिसका अर्थ है रोग के चाहे जो लक्षण प्रकट हों या रोगी के लक्षण देखकर रोग को चाहे जो नाम दिया जाय, सभी परिस्थितियों में एक ही बात रहती है।

प्राकृतिक चिकित्सा का यह दावा है कि प्रत्येक रोग ठीक हो सकता हैं परन्तु प्रत्येक रोगी नहीं। हमारे शरीर स्वस्थ को रखने के लिये एक शक्ति होती है, जिसे डाक्टरी भाषा में वाईटलिटी फोर्स तथा प्राकृतिक चिकित्सा में जीवन शक्ति कहते हैं। रोगों को दूर करने में मुख्य कार्य यही शक्ति करती है। जिसके अन्दर जितनी यह शक्ति अधिक होती है, वह उतने ही जल्दी ठीक हो सकता है। जिस रोगी की जीवन शक्ति कमजोर है उसको ठीक होने में अधिक समय लगता है। प्राकृतिक चिकित्सा से निम्न रोगियों को लाभ होना सम्भव नहीं होता है।

1 जिनके शरीर की बनावट में जन्म से या दुर्घटना या आपरेशन के कारण शरीर में त्रुटि हो।

2 जो संयम से नहीं रहते एवं प्राकृतिक चिकित्सा के लिये आवश्यक समय नहीं देते है।

3 जो मानसिक वहम में फंसे रहते हैं, और शुभ नहीं सोचते।

ऐसा देखा गया है कि उन रोगियों का रोग जो आराम नहीं करना जानते देर से जाता है। चिन्तत भयातुर, कुछ घबड़ाये हुये, और हमेशा शिकायत करते रहने वाले रोगी, रोग को टिकाये रखते हैं। यदि वे इन संहारक विचारों को त्याग कर आराम से रहने लगते हैं तो उनके रोग की अवधि कम हो जाती है।

## प्रश्न : रोगी :—बिना औषधि के प्राकृतिक चिकित्सा रोग कैसे दूर करती है ?

उत्तर :—डा० :—आपने बहुत सुन्दर प्रश्न पूछा है। जानने की बात यही है। प्राकृतिक चिकित्सा हमें सबसे पहले यही बतलाती है कि नीरोग बनाने की शक्ति मनुष्य के शरीर के अन्दर है। क्या आपने कभी विचार किया कि हमारे आपके कल्याण के लिये वह शक्ति कितनी रचनात्मक है और कितनी उपकारी है, इसके उदाहरण इतने आम हैं कि तथ्य से कोई इन्कार नहीं कर सकता। एक अति साधारण सी स्थिति लीजिये। आंख में यदि जरा सी धूल पड़ जाती है, तो देखिये प्रकृति की कष्ट दूर करने वाली शक्ति इतनी तेजी से सहायता के लिये खड़ी होती है कि आंख से पानी निकलने लगता है और प्रकृति बहाकर उस अनपेक्षित वस्तु को तुरन्त बाहर कर देना चाहती है। जब तक किरकिरी आंख में रहेगी प्रकृति अपना प्रयास बन्द करने वाली नहीं।

तथ्य यह है कि ऐसी कोई चीज जगत में नहीं है जिसमें बीमार को रोगमुक्त करने की क्षमता हो। रोगमुक्त करने की क्षमता तो व्यक्ति के अन्दर है जिसे हम जीवन शक्ति कहते हैं, अंग्रेजी में लाईफ फोर्स, डाक्टरी भाषा में वाईटलिटी तथा रजिस्टेन्स पावर, और धार्मिक भाषा में इसे प्राण शक्ति कहते हैं। वास्तव में स्वास्थ्य लाभ तो रोग का लक्षण किसी दवा दारू से न मिटाकर जीवन शक्ति को इतना सशक्त बनाने में है कि रोग का लक्षण आप ही समाप्त हो जावे और व्यक्ति का शरीर ठीक रूप में अपना क्रिया कलाप करे। कहना चाहिये कि रोग मुक्ति जीवन शक्ति की प्रक्रिया है। वास्तव में आश्चर्य जनक प्रतीत होगा कि ऐसी शक्ति और सामर्थ्य हमारे अन्दर ही है, जो शरीर के असन्तुलन (रोग) को दूर करके हमें यथापूर्व नीरोग तथा स्वस्थ बना सके। परन्तु यह सम्भव तभी होगा जब हम शक्ति और सामर्थ्य को अपना अपना काम भी करने दें। आप पूछेंगे कि कहां है वह शक्ति जिससे हम रोग दूर कर सकते हैं ? इसका सरल उत्तर यह है कि यह वही शक्ति है जिसके द्वारा हमारा हृदय धड़कता है। रक्त सारे शरीर में चक्कर लगाता है आंखें देखती हैं, कान सुनते हैं, फेफड़े श्वास लेते हैं, मस्तिष्क अपना काम करता है। जब यह शक्ति कमजोर होने लगती है, जब भी यह अलसाने लगे तो हमें चाहिये कि उसे जागे रहने योग्य बनाते रहें। यह शक्ति ही हमारे रुग्ण तन्तुओं (टेसू) को नये सिरे से ताजा करके, फिर से उन्हें अपना काम ठीक तरह से करने योग्य बना सकती है।

उदाहरण के लिये जुकाम को लींजिये। अकेले अमेरिका में लगभग 19 करोड़ व्यक्ति प्रति वर्ष 4 बार जुकाम के शिकार होते हैं, कोई चार से अधिक बार कोई कम। अब यह बात आधुनिक चिकित्सा स्वीकार करने लगे हैं कि जुकाम का उनके पास कोई इलाज नहीं है। कोई गोली, मिक्सचर, इन्जेक्सन अथवा वेक्सीनेशन ऐसा नहीं है जिसे

जुकाम का इलाज कहा जा सके। पर हर व्यक्ति का जुकाम अच्छा हो ही जाता है किसी का दो दिन में, किसो का चार दिन में और किसी का एक दो माह में। अब प्रश्न यह है कि जब जुकाम का इलाज ही नहीं है तो फिर जुकाम अच्छा कैसे होजाता है ? वस्तुत· शरीर की वही प्राण शक्ति है जो जुकाम को अच्छा कर देती है। इस शक्ति का सबसे वड़ा उदाहरण है टूटी हुई हड्डी का जुड़ जाना है, डाक्टर टूटी हुई हड्डी में उसको स्वाभाविक स्थिति में रखकर लकड़ी की पट्टीयों (Splints) में बांघ देता है, या आधुनिक डाक्टर उसे पेरिस प्लास्टर में जकड़ देता है। कुछ दिन बाद खोलने पर टूटी हुई हड्डी जुड़ी हुई मालूम पड़ती है। टूटी हुई हड्डी को जोड़गे के लिये किसी प्रकार की औषधी, गोंद, सीमेन्ट, चूना या मरहम अन्दर नहीं रखी जाती। फिर जीवन शक्ति ने ही बिना औषधी के जोड़ने का कार्य किया। यदि जुकाम को छोड़ा समझ लिया जाय तो पूरी बात समझ में आ जावेगी। गलत रहन सहन के कारण शरीर में विजातीय द्रव्य संग्रहीत होते है। उनको बाहर निकाला फैंकने का कार्य जुकाम करता है। पूरा पूरा विजातीय द्रव्य का निकाल जाना ही सच्चे अर्थों में स्वास्थ्य लाभ है। यदि हम ऐसा कोई पदार्थ खाकर श्लेष्मा निकालना बन्द कर दे तो वह आज भले ही बन्द हो जावे पर, कल उसी रूप में या कोई नये स्रोत खोलकर निकलेगा। इसका कारण यह है कि पदार्थ शरीर के लिये बेकार है। अतः रोगी को सहायता देकर उस पदार्थ को निकलवा देना और रोगी के रहन सहन और खानपान सुधार कर फिर वैसी स्थिति न आने देना हीं सच्चा स्वास्थ्य है।

**प्रश्न : रोगी :—आधुनिक चिकित्सा विज्ञान रोग का कारण कीटाणुओं को मानता है। क्या रीग और कीटाणू सिद्धान्त गलत है ?**

उत्तर : डाक्टर :—इस सिद्धान्त को भ्रान्त धारणा कहना चाहिये। कीटाणू तो सबके शरीर में होते हैं। परन्तु रोग का कारण कीटाणु नही होते।

जो श्वास हम लेते हैं उसमें भी कीटाणु होते हैं। इसी तरह हम जो भोंजन करते हैं और जो पानी पीते हैं सभी में कीटाणु होते हैं। जो दही हम भोजन में उपयोग करते हैं वह जमता ही विकटीरिया से है। पर हम यह नहीं मानते कि रोग के कारण कीटाणु होते हैं। हम यह भी नहीं कहते कि जो रोग कीटाणू जन्य कहे जाते हैं रोग की दशा में कीटाणु नहीं रहते, पर हम इस वात को स्पष्ट करना चाहते हैं कि ऐसी अवस्था में उन कीटाणुओं का होना यह सिद्ध नहीं करता कि कीटाणु रोग का कारण है। यदि कीटाणू रोग का कारण होते तो उनको पहले से शरीर में उपस्थित रहना चाहिये था उस रोग के लक्षण प्रकट होने से पूर्व भी। परन्तु इसके सम्वन्ध में विचार यह है कि रोग के लक्षण बिना कीटाणु की उपस्थिति में भी देखे जाते हैं। इसका प्रमाण यह कि "फुष्फुसीय ट्यूमर क्लोतसस (यक्ष्मा)" बिना यक्ष्मा के कीटाणु की उपस्थिति में भी होता है। डा० म्रार० एस० वाटकिस ने इस सम्वन्ध में अपनी पुस्तक (रक्त द्वारा रोग निदात) मैं कहा है कि रोग से पूर्व यक्ष्मा के कीटाणू होने का कोई प्रमाण नहीं है।

प्राकृतिक चिकित्सा तो मानती है कि बीमारी का कारण शरीर में संचित विजातीय द्रव्य ही सभी रोगों का कारण हैं। कीटाणू तो शरीर में जमा हुए विजातीय द्रव्य (कूडा-करकट) पर ही वृद्धि पाते हैं। यदि हमारा शरीर साफ रहे तो वे शरीर का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।

वास्तव में कीटाणु हमारे मित्र होते हैं शत्रु नहीं, क्योंकि वे रोग को हमारे शरीर से हटाने में मदद करते हैं, रोग को पैदा करने में नहीं। जो डाक्टरी सिद्धान्तों को ईश्वर वाक्य समझ बैठे हैं उन्हें कीटाणुओं के मित्रों का सा लाभ करने वाली बात हास्यप्रद प्रतीत होगी पर फल सड़ जाता है तब उसे कीड़े पड़कर उसे खाने लगते हैं।

दुनियां में कीटाणू का कार्य ही सफाई (गन्दगी साफ) करना है। वे शरीर में भी वही कार्य करते हैं, जो सड़े फल में कीड़े । कीटाणुओं के कारण फल नहीं सड़ते बल्कि कीटाणु भोजन की तलाश में रहते हैं जो सड़ रहा हो। कीटाणु स्वस्थ शरीर को कोई क्षति नहीं पहुंचा सकते शुद्ध शरीर में चाहे करोड़ों कीटाणु क्यों न डाल दिये जायें, वे वहां जाकर आवश्यक रूप में मर जायेंगे, क्योंकि वहां उनके खाने लायक कोई चीज नहीं मिलेगी। दूसरे शब्दों में यदि मान लो हमारे घर में कोई मेहमान आता है और यदि मेहमान को भोजन न दिया जाए तो वह जल्दी ही वापिस चले जायेंगा। गन्दे शरीर में (बीमार शरीर में) कीटाणु का मिलना इस बात का सबूत है कि वे सफाई के उस कार्य को कर रहे हैं जिस कार्य के लिये उनका जन्म हुआ है। इसलिये कीटाणु हमारे शत्रु नहीं मित्र हैं।

रोग को आरोग्य करने के लिये कीटाणु मार देना बड़ी बात नहीं बल्कि शरीर को कैसे साफ किया जाये और शरीर को पूर्ण रूप से स्वस्थ कैसे रखा जाये यह समझना बड़ी बात है। शरीर की सफाई किये बिना यदि केवल औषधी से ही रोग को हटा दिया जाये तो प्रकृति तीव्र रोग उत्पन्न करके देह की जल्दी साफ करने की क्षमता धीरे धीरे खो बैठती है और एक पुराना आकार ले लेती है।

## प्रश्न : रोगी :-बीमार होने पर लाखों लोग दवा से अच्छे होते देखे जाते हैं ? परन्तु दवा को व्यर्थ कैसे कहा जा सकता है ?

उत्तर : डा :—दवा जादुई गुण है। वह रोग से तत्काल छुटकारा दिला सकती है। यह विचार इतनी गहराई से सारे विश्व भर में मान्य है कि हमारे लिये यह आवश्यक हो गया है कि हम बार बार यह दोहराते

रहें कि दवा से उपचार के पीछे कोई गम्भीर तर्क नहीं है और इस विचार की नींव ही सर्वथा खोखली है। रोग क्या है और किस कारण पैदा होता है इसे समझ लेने के बाद इस सिद्धान्त का खोखलापन स्वतः स्पष्ट हो जाता है।

गलत रहन-सहन, आहार विहार से शरीर में विजातीय द्रव्य (कूडा करकट) अधिक पैदा होने लगता है। प्रकृति जब उसे पूरी तरह बाहर नहीं निकाल पाती, तो वह शरीर के अन्दर भिन्न भिन्न स्थानों पर जमा होने लगता है। जिस प्रकार कूडे के ढेर पर लोग कूड़ा फैंक देते हैं उसी प्रकार उस गन्दगी के साथ और गन्दगी (विजातीय द्रव्य) बढ़ता जाता है और प्रकृति यह ख्याल करके कि यह गन्दगी शरीर के अवयवों के कार्य में रुकावट डालती है तो प्रकृति उसे बुखार, अतिसार, (दस्त) जुकाम के द्वारा बाहर निकालना चाहती है। पर हम प्रकृति की इस सूचना को सुनने तथा सहायता करने की बजाय डाक्टर के पास पहुंच जाते हैं कि डाक्टर मेरा बुखार उतार दो, मेरे दस्त रोक दो। डाक्टर तुरन्त कोई गोली, मिक्सचर आदि दे देता है या टीका लगा देता है। इसके प्रयोग से शरीर का तापमान नीचे चला जाता है और ज्वर कम हो जाता है, दस्त बन्द हो जाता है और रोगी समझता है कि रोग दूर हो गया हैं पर वास्तव में डाक्टर ने प्रकृति द्वारा सफाई का काम ही रोक दिया। विषाक्त तत्व जहां का तहां ही दवा रह गया। रोग का कारण दूर न किया जाय तो कब तक रोग दवा रह सकता है। हर दवा का शरीर पर दुहरा प्रभाव पड़ता है। एक अस्थायी दूसरा स्थाई। जो दवायें रोगी को दी जाती हैं वे उसके रोग को दवाने के लिये दी जाती हैं और इस बात का बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया जाता है कि उसका दूसरा प्रभाव पहले के बिल्कुल विपरीत भी हो सकता है। यह बिल्कुल सही है कि हर दैनिक उद्वेग की प्रतिक्रिया भी निश्चित है।

उदाहरण के लिये थके हुये घोड़े को यदि चाबुक लगाये तो क्या होगा ? थोड़े समय के लिये वह गाड़ी को अधिक श्रम से तेजी से खींचेगा पर शीघ्र ही उसका दम उखडने लगेगा और वह और अधिक कमजोरी का अनुभव करेगा। थके हुये घोड़े को जिस तरह चाबुक मारा जाता है उस समय चाबुक के रूप में उसे शक्ति नहीं दी जाती बल्कि घोड़े के शरीर की जो बची शक्ति है, वह चाबुक की मार से निकाली जाती है। इसके फल स्वरुप कोडा लगाने के बाद. वह पहले की अपेक्षा और अधिक कमजोरी का अनुभव करता है। उत्तेजक दवा का शरीर पर ठीक ऐसा ही प्रभाव पड़ता है।

दवा रोग का लक्षण दबाने के सिवा और कोई काम नहीं करती। इसके उदाहरण के रुप में हम दर्द को ले सकते हैं किसी। भी प्रकार के दर्द के लिये हम दर्द नाशक दवा लेते हैं। पर तथ्य यह है कि दर्द (पीड़ा) स्वतः कोई रोग नहीं है न ही स्वयं कोई कारण है। वह अधिक गहराई के अन्दर की कोई स्थिति का एक लक्षण है जो पीढ़ा स्थूल से कहीं दूर हो सकता है जिस तरह पेट में गैस होने से सिर दर्द होने लगता है। एक कहावत भी है कि "आंत भारी तो माथा भारी" अर्थात पेट का भारी होने से सिर पर भारीपन होना स्वाभविक है पीड़ा के लक्षण दवा देने से वे कारण दूर नहीं होते। इसका सही इलाज उस स्थिति को दूर करना है जिसके लक्षण के रूप में दर्द की अनुभूति हो रही है।

एक बार जहां हम यह अनुभव करते है कि दवा, अपने पहले अस्थायी प्रभाव कोध्यान में रखकर दी जाती, है और उसके दूसरे प्रभाव पर ध्यान नहीं दिया जाता, तो हम यह बात समझ सकते हैं कि दवा नुकसान पहुंचावेगी। इसी लिये कई भले डाक्टर कहते सुने जाते हैं कि रोगी दवा चाहते हैं और दवा उन्हें दी जाती है। उपचार के दौरान

में रोगी को कष्ट दूर होता प्रतीत होता है और उस दवाई को बहुत बढ़िया समझने लगता है परन्तु कुछ ही समय में प्रायः फिर उस रोग का प्रकोप बढ़ जाता है। जानते हो क्यों ? इस लिये कि दवाओं का प्रयोग प्रकृति के विरुद्ध है।

**प्रश्न : रोगी :- प्राकृतिक चिकित्सा में जो उपचार के तरीके हैं वह आयुर्वेद शास्त्र के प्राचीन तरीकों से मिलते है। क्या प्राकृतिक चिकित्सा आयुर्वेद का प्राचीन रूप नहीं है ?**

उत्तर : डा० :—आपने बिल्कुल ठीक कहा। शुद्ध आयुवेद ही प्राकृतिक चिकित्सा है। हमारा आयुवेद शास्त्र युगों युगों से यह बात दावे से कहता आया है।

"याहा दीर्णं शमयति नान्यं व्याधि करोति च।<br>
सा क्रिया न तु व्याधि हरत्यन्यमुदीरयेत ॥

अर्थात उपचार वह चाहिये, जो उठे हुये रोग को मिटाये और नया रोग न उठावे, न कि वह एक व्याधि, तो मिटाये और दूसरी पैदा करदे। प्राकृतिक उपचार में एक रोग आसानी से दूर होने के साथ ही नये पैंदा होने वाले रोगों को जड़-मूल से उखाड फैंकता है।

आजकल के अधिकांश वैद्य प्रकृतोपचार क्या वस्तु है? जानते तक नही। विशुद्ध आयुवेद कैसा होता है उन्हें पता तक नहीं है ? आधुनिक वैद्य इन पुराने तरीकों को भूल गये है, कारण आजकल अंग्रेजी दवाईयों की कुछ ऐसी माया फैली हुई हैं कि उनके जाल में वेतरह फंसकर अपनी असल विद्या को भूल गये है, और जो कुछ लोग उस असल विद्या को जानते हैं वह उपयोग में नहीं लाते। आज रेड़ीमेड़ युग हर चीज के

व्यवहार के लिये तैयार है। दूसरी बात यह हैं कि आजकल आयुर्वेदिक कालेजो में 60% ऐलोपेथिक चिकित्सा की शिक्षा दी जाती है, और कॉलेज से तैयार विद्यार्थी, आयुर्वेदिक चिकित्सा को छोड़ कर ऐलोपेथीक दवाईयो का ही उपयोग करते है। आज संसार के प्राकृतिक चिकित्सक जिन सरल निर्दोष और प्राकृतिक उपायों से रोगियों को चंगा करते हैं, उनकी संमझ में यह चिकित्सा एक नई प्राणाली है और जिसके सम्बन्ध में वे यह मानने को तैयार नहीं कि यह वही विशुद्ध आयुर्वेद है जो प्राचीन में प्रचलित था।

प्राचीन समय में आयुर्वेद के आचार्य पंचकर्म द्वारा शरीर का शोधन करके निरोग करते थे। प्राकृतिक चिकित्सा और आयुवेद में आश्चर्यजनक समानता है। आयुर्वेद में सर्वप्रथम शोध क्रिया रखी है, शोधन का अर्थ है शरीर शुद्धि। इसके लिये पंचकर्म बताये गये है।

| | आयुर्वेदिक | प्राकृतिक चिकित्सा |
|---|---|---|
| 1 | स्नेहन (शरीर में तेल लगाना) | तेल मालिश |
| 2 | स्वेद (पसीना निकालना) | स्टीम बाथ |
| 3 | वमन (पानी पीकर बाहर निकालना) | कुजंर क्रिया |
| 4 | विरेचन (दस्त लाने वाली चीजो का उपयोग | सब्जी के सूप जूस का उपयोग |
| 5 | वस्ति | एनिमा |

पंचकर्म की तभी आवश्यकता पड़ती थी, जब शरीर गलत आहार विहार से कई प्रकार के विजातीय द्रव्य (मलो का संचय) जमा हो गये हो। प्राचीन समय इन में पांचों क्रियाओं के द्वारा ही रोग मुक्त किया जाता था।

अतः यह कहने में कोई आपत्ति नहीं प्रतीत होती कि आयुर्वेद जो मूल चिकित्सा भूल गया है, प्राकृतिक चिकित्सा का स्वरूप प्रकृति की ओर (Back to Nature) ही नहीं बल्कि आयुर्वेद (Back to Ayurveda) भी कहा जा सकता है।

## प्रश्न : रोगी :-क्या प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में कुछ जड़ी बूटियों तथा होमीयोपेथिक और बायोकेमिक का उपयोग किया जा सकता है ?

उत्तर : डा० :-इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि प्राकृतिक चिकित्सा के तरीकों के साथ कुछ जड़ी बूटियों का उपयोग लाभदायक सिद्ध हो सकता है। पर वह केवल प्राकृतिक चिकित्सा में सहयोग कर सकती है, अकेली नहीं। ऐसा न होने पर रोगी सारा श्रेय जड़ी बूटियों पर दे डालेगा और स्वास्थ्य की प्राप्ति या रक्षा के लिये प्राकृतिक चिकित्सा की जरूरत ही नहीं समझेगा। अगर मनुष्य का स्वास्थ्य के सम्बन्ध में ज्ञान रोगग्रस्त होने पर उसे जड़ीबूटियां वाले या होमोपेथी के पास जाने को बाध्य करता है तो समझना चाहिये कि उसने रोग से कोई शिक्षा नहीं ग्रहण की और वह भी उस मनुष्य के समान है जो दर्द आदि होने पर अंग्रेजी दवाओं, रक्तांबु, आदि में आरोग्य तलाश करता है। हम यह मानते हैं कि जड़ी बूटियां तथा होमोपेथिक और बायोकेमिक दवायें अंग्रजी दवाओं से कहीं अच्छी होती हैं। फिर भी कहना चाहते हैं कि जड़ी बूटियों का का सहारा लेने पर भविष्य में स्वास्थ्य की रक्षा कैसे की जा सकती है। इस सम्बन्ध में रोगी महत्व की बात नही सीख सकेगा। वह प्रचलित औषधियों में विश्वास करने वाले की तरह अपना रहन-सहन पहले जैसा बनाये रखेगा। अन्तर सिर्फ यह होगा कि अंग्रेजी दवाईयों

का सहारा न लेकर जड़ी बूटियों का सहारा या होमोपेथिक गोलियों का सहारा पकड़ेगा। जब तक रोगी को यह शिक्षा नही मिलेगी कि खुद उसका रहन-सहन उसके स्वस्थ या रुग्ण रहने का मुख्य कारण होता है। तब तक यही समझना चाहिये कि स्वास्थ्य के सम्बन्ध में कोई बात नही सीखी। और आज प्राकृतिक चिकित्सा का यही सिखलाना मुख्य कार्य है। इसी प्रकार का ज्ञान मनुष्य को रोग के भय से मुक्त कर उसका जीवन सम्बन्धी सारा दृष्टिकोण परिवर्तित कर सकता है।

## प्रश्न : रोगी :-क्या प्राकृतिक चिकित्सा में मूत्र (मानव मूत्र) का प्रयोग हो सकता है ?

उत्तर : डा० :–अगर मूत्र हमारे शरीर के लिये आवश्यक होता तो हमारा शरीर इसे बाहर ही क्यों निकालता ? प्राकृतिक चिकित्सा यह मानती है कि रोगों का कारण शरीर में विजातीय द्रव्य इकट्ठा हो जाना है, और रोग निवारण उस गन्दगी को दूर करने से हो जाता है। आहार–विहार की गलतियो के कारण शरीर में विजातीय द्रव्य जमा हो जाता है और वह मल मार्ग द्वारा स्वाभाविक रूप से निकल जाता है। वह पेशाब, पाखाने पसीने के रूप में निकलता है जो शरीर की गन्दगी है। अतः प्राकृतिक चिकित्सा उसे जहर मानती है।

अगर आपरेशन द्वारा मूत्र नालियों को मूत्राशय की बजाय बड़ी आंत में जोड़ दिया (जैसा मूत्राशय की कुछ बीमारियो में करना पड़ता है) तो मूत्र फिर से हजम हो जाने के कारण खून में (शरीर में भी) कुछ रसायनो की कमी और कुछ की अधिकता हो जाती है, विशेषकर पोटेशियम की कमी और यूरिया तथा क्लोराइड की अधिकता, जिसके कारण रोगी को बेचैनी, अधिक प्यास, भूख में कमी, श्वास में तेजी, जोड़ो में दर्द (गठिया) अन्त में बेहोशी का कारण भी बनती है। ठीक इसी प्रकार का

प्रभाव स्वंमूत्र सेवन करने से भी होता है।

हिन्दुस्तान में कुछ वर्ष पहले आर्मस्ट्रांग की पुस्तक वाटर श्राफ लाईफ की ओर कुछ लोगों का ध्यान गया। इनमें अग्रणी हैं रांव जी भाई पटेल। इन्हें सन 1954 में दिल का दौरा पड़ा और प्रचलित उपचार चला फिर चार साल बाद 1958 में दिल का दूसरा दौरा पड़ा तो उन्होंने दी वाटर आफ लाईफ के आधार पर स्वमूत्र पान किया और आरोग्य अमूल्य साधन स्वमूत्र पर पुस्तक लिखी इन्हें स्वमूत्र का उपयोग करते रहने पर भी चार साल बाद फिर दिल का दौरा पड़ा और जिसमें इनका देहान्त हो गया।

प्राकृतिक चिकित्सा के सो वर्ष के इतिहास से कहीं भी मूत्र चिकित्सा का उल्लेख नहीं है। और आखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद ने इसे स्वीकार नहीं किया है। अनेक प्रकार की बीमारियां के जीवाणू मूत्र द्वारा शरीर से विसर्जित किये जाते है, उन्हें दुबारा शरीर में प्रवेश दिलाना कहा की अक्लमन्दी है। स्वमूत्र इस लिये सेवन करना कि उससे किसी नेता को लाभ हुआ है, भेड़ चाल के सिवाय कुछ नहीं। अतः मूत्र चिकित्सा प्राकृतिक चिकित्सा का अंग नहीं है।

**प्रश्न : रोगी :-कुछ प्राकृतिक चिकित्सा में रोगी को उपवास या भूखा रखकर कमजोर बना दिया जाता है। क्या प्राकृतिक चिकित्सा से वास्तव में कमजोरी आती हे ?**

उत्तर : डा :-प्राकृतिक चिकित्सा कराने के लिये आये अथवा प्राकृतिक चिकित्सा प्रारम्भ करने वाले नये स्वास्थ्यार्थी प्रारम्भ में अपना वजन घटता देखकर चिन्तातुर ही जाते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्राकृतिक उपचार काल में वजन जरूर कुछ कम हो जाता है किन्तु उपचार के

अन्त में यानी कुछ समय बाद वजन घटने की मात्रा से अधिक परिमाण में बढ़ जाता है, क्योंकि उपचार के बाद नऐ तन्तुओं का निर्माण होता हैं, नयी मांसपेशियां गठित होती हैं और शरीर का वजन बढ़ जाता है । शरीर रूपी यन्त्र अधिक सक्षम बन जाते हैं और सुचारु रूप से कार्य करने लगता है। यही कारण है कि दुर्बल व्यक्ति जो पहले अधिक भोजन के बावजूद दुबले पतले बने रहते हैं वे उपचार के बाद अल्प भोजन पर भी वजन में वृद्धि करते हैं ।

अतः जब कोई व्यक्ति प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों से प्रभावित होकर उसकी शरण में आता हैं और प्राकृतिक भोजन अपनाने से उसका वजन घट जाता है. तो उसमें चिन्ता की कोई बात नहीं। इसे एक स्वाभाविक और प्राकृतिक प्रक्रिया मान लेना चाहिये। शरीर शोधन की दृष्टि से रोगी को शोधक आहार दिया जाता है। इससे शरीर का ऐसा कचरा निकल जाता है, जो शरीर के लिये सर्वथा अनावश्यक था और शरीर का किसी रूप में हित करने में पूर्णता: अक्षम होता है । पर उन रोगियों की शिक्षा दीक्षा इस रुप में हुई होती है कि वे स्वीकार किये बैठे होते हैं कि वजन ही स्वास्थ्य की कसोटी है, और वजन घटना स्वास्थ्य खराब होने के लक्षण है ।

यद्यपि यह निष्कर्ष सर्वथा गलत है, पर इसी दृष्टिकोण के फल स्वरुप जब प्रारम्भ में रोगी का वजन घटने लगता है तो रोगी चिन्तातुर होकर सोचने लगता है कि कोई खराबी आ रही है । इसका निराकरण आवश्यक है । उनकी चिकित्सा में अपना पूर्ण प्रभाव दिखाने में व्यवधान उपस्थित करती है।

बहुत से व्यक्ति अपना वजन बढ़ाने का बेहतर प्रयास करने के बावजूद अपना वजन नहीं बढ़ा पाते। इसका कारण यह होता है कि उनके शरीर में पोषक तत्वों को आत्मसात करने की कमी रहती है ।

दूसरी बात यह है कि वजन बढ़ाने की लालसा में ऐसे लोग शरीर पर जो अतिरिक्त पोषण भार से लाद देते हैं। शरीर का वजन बढ़ने की बजाय घटता ही जाता है। जिनका वजन कम है और बढ़ाने के इच्छुक हैं उनको चाहिये कि पहले वे शरीर में पोषण तत्वों के आत्मसात करने की क्षमता बढ़ायें। यद्यपि सुनने में बात अजीब लगती है, पर ऐसे लोगों को चाहिये कि वे कुछ दिनों का उपवास करें और उपवासकाल में नित्य प्रातः साधारण पानी का एनिमा लिया करें। इससे शरीर का कचरा निकलेगा और शरीर की पोषण करने की क्षमता बढ़ेगी।

एक दुर्बला व्यक्ति वजन बढ़ाने के आशय से किसी चिकित्सक के पास गया। उस चिकित्सक ने वजन बढ़ाने के लिये व्यक्ति को उपवास करने की सलाह दी। उसके लिये यह बड़ा अजीब लगा कि उपवास से वजन बढ़ाया भी जा सकता है? वास्तव में शरीर का दुर्बल होना भोजन या पोषक तत्वों की कमी नहीं बल्कि हमारे पाचन यन्त्रों का शिथिल और मन्द होना है। ऐसे रोगियों को भोजन की आवश्यकता नहीं बल्कि पाचन और शोषण यन्त्रों को ठीक करने की है। अगर ये यन्त्र ठीक कर दिये जावें तो उनके वजन बढ़ाने में कोई कठिनाई नहीं आ सकती है।

जब हम प्राकृतिक चिकित्सा पर विचार करने लगते हैं तो हमें अनेक प्रश्नों पर अपना दृष्टिकोण बदलना होता है, और एक नये धरातल से सारी बातें समझनी होती हैं। अधिकांश लोग जिसे श्वेत कहते हैं, उसे हम काला कहेंगे जिसे लोग काला कहेंगे उसे हम श्वेत। निश्चय ही चिकित्सा क्षेत्र में इससे बड़ी क्रान्ति नहीं हो सकती।

किसी किसी को जिनका शरीर अत्यन्त खराब है, जिनके शरीर में विजातीय द्रव्य अधिक हैं रक्त प्रवाह में मल गुजरने पर कुछ कमजोरी मालूम हो सकती है। यह कमजोरी धीरे धीरे कुछ ही दिनों में ठीक हो जाती है।

**प्रश्न : रोगी :-प्राकृतिक चिकित्सा में अक्सर एनिमा करने की सलाह दी जाती है, परन्तु एनिमा करना तो अप्राकृतिक हैं। कही इसके उपयोग से एनिमा लेने की आदत तो नहीं पड़ जाती है ?**

उत्तर :-डा० :—अगर प्राकृतिक जीवन व्यतीत किया जाये, अगर आहार विहार नियमित और संयमित हो अगर काफी कसरत की जाये ओर आवश्यकतानुसार आराम किया जाये तो शायद एनिमा की आवश्यकता ही न पड़े पर अगर किसी कारण से रोग हो भी जाये एनिमा के प्रयोग में संकोच करना बुद्धिमानी नहीं।

एनिमा यौगिक क्रिया वस्ति का सरल रूप है । इसके समुचित प्रयोग से लाभ की बजाय कभी हानि नही हो सकती । न ही इसके विधिवत प्रयोग से इसकी आदत पड़ सकती है । जिस प्रकार मूंह में पानी लेकर कुल्ला करना और मूंह की सफाई करना स्वाभाविक है उसी प्रकार आंत को साफ करने के लिये आंत में साधारण पानी चढ़ाना और आंतो को धोना आवश्यक है। पेट ( आंतों ) को साफ करने के लिये जिसने साधन हैं, एनिमा उन सबसे कम अप्राकृतिक है। बजाय इसके कि मुंह में गोली डालकर सारी पाचन प्रणाली, आमाशाय छोटी आंत और बड़ी आंत में भी खलबली पैदा करना और इस तरह सारी पाचन प्रणाली को कमजोर बना देना। दवा खिलाकर पेट साफ करना तो बहुत ही हानिकारक और अप्राकृतिक है। उससे कई और खराबियां सामने आती हैं जो जीवन भर साधारण पानी का एनिमा लेने से भी नहीं हो सकती । हमारा यह आशय नहीं है कि जीवन भर एनिमा लिया जाये । चिकित्सा के प्रारम्भ में ही कुछ दिनों तक एनिमा की आवश्यकता होती हैं । पर अगर कोई जिसकी आंत सदा के लिये कमजोर हो गयी हैं जैसे कोई

बुजुर्ग आदमी हर रोज साधारण पानी के एनिमा से अपनी आंतों को साफ करे तो इस लाचारी के अलावा और खराबियां नहीं होंगी।

यह सीधी बात है कि अगर किसी कमरे में गन्दगी है तो यहां पानी डालकर धो देना प्राकृतिक उपाय है। यदि कमरे की गन्दगी धोने के लिये कमरे में पानी न डालकर छत पर से पानी गिराया जाये, जो जीना, सायवान और दूसरे कमरों में होता हुआ इस कमरे में पहुंचे तो ये दोनों बातें अस्वाभाविक और मूर्खता की परिचायक होंगी।

एनिमा के बारे में दो तीन बातें जाननी चाहियें। एक तो पानी की मात्रा आवश्यकता से अधिक न हो। आंत में यों तो कई सेर पानी आ सकता है पर दो ढाई सेर से अधिक पानी चढ़ाना ठीक नही। अगर लगातार कई हफ्ते या कई महीने एनिमा लेना है तो हर रोज इतनी मात्रा में भी लेना ठीक नहीं है। एक-दो-तीन, दिन छोड़कर पूरी मात्रा ली जाये और बाकी दिन पाव-डेढ़ या आधा सेर पानी लेकर आँतों में दृढ़ता लाई जाये। बहुत पानी से आँत ढीली पड़ जाती है।

एनिमा का पानी गरम हो या ठण्डा, इस पर भी ध्यान देना चाहिये। गर्म पानी से विकार जरूर उखड़ता है परन्तु कुछ कमजोरी आती है और आंतें फैलती हैं और गरम पानी से चक्कर भी आ सकते हैं। इसलिये अधिकतर ऐसे पानी का उपयोग करना चाहिये जो न तो ठण्डा हो न गरम। साधारण पानी का एनिमा टॉनिक (थोड़े पानी) एनिमा आँतों को सजग कर देता है और उन्हें बल देता है जिससे आंतें अपना कार्य धीरे करने लगती है। शक्तिदायक एनिमा हर रोज तथा दिन में दो बार भी लिया जा सकता है। यह एनिमा नित्य महीनों लेने से भी लाभ के सिवाय इससे कुछ भी हानि की कोई सम्भावना नहीं हैं

नोट :-एनिमा का मतलब लोग डाक्टरी एनिमा (साबुन के पानी का एनिमा) से न समझें। साबुन के पानी का एनिमा आंतों को खुश्क तथा कमजोर बना देता है। प्राकृतिक चिकित्सा में साधारण पानी का उपयोग ही लाभकारी माना गया है।

**प्रश्न : रोगी :- आधुनिक विज्ञान में सरजरी (शल्य चिकित्सा, चीर-फाड़) में काफी उन्नति हुई है। बड़े बड़े ऑपरेशन सफलता पूर्वक किये जाते हैं। क्या ऑपरेशन आवश्यक नहीं है ?**

उत्तर :- डा० : जिस प्रकार किसी मशीन का कोई पुर्जा निकाल देने या काट कर छोटा कर देने से मशीन बेकार हो जाती है, उसी प्रकार यह मानव शरीर ईश्वर ने अपूर्ण नहीं बनाया न ही कोई ऐसा आदेश दिया कि यह नीचे डाक्टर के पास कटवा ले। जिस प्रकार वृक्ष की एक शाख काट देने से वृक्ष समाप्त नहीं हो जाता उसी प्रकार किसी अंग को काट देने पर कोई भी रोग समाप्त नहीं हो जाता। जैसे अपेण्डिक्स हमारी छोटी आंत की समाप्ति एवं बड़ी आंत को जोड़ने वाली पूछ (ग्रन्थी) होती है। कब्ज के कारण बड़ी आंत में मल जमा रहने से मल और कण एवं गन्दा रस आंत पूछ की ग्रंथी में जमा होता रहता है। इसी से पूछ का मुंह बन्द हो जाता है और दर्द अथवा सूजन उत्पन्न होती है और इसमें तेज दर्द होंने पर डाक्टर आपरेशन करके इसको निकाल फैंकते हैं, और कहते है कि यही एकमात्र इसका इलाज है। अगर इसे ना काटा जाय तो सारे शरीर का खून गन्दा करके रोगी को मार सकती है। परन्तु दुःख इस बात का है कि असली रोग के कारण को नहीं पहचानते और रोगी अपेण्डिक्स विहीन भी कर दिया और रोग की जड़ भी वही रही। सबसे बड़ी बात तो यह कि आपरेशन के बाद भी पेट में उसी तरह दर्द उठता है। इसी प्रकार नजला जुकाम

के लिये नाक का आंपरेशन, पुरानी खांसी के लिये फेफड़ों का आपरेशन पेशाब रोगों में गुर्दों का आपरेशन, चर्म रोगों में नसों में नस्तर, प्रशव करने में आंपरेशन, गर्भ निरोध कराने में आपरेशन और टांसिल कटवा देने के बाद भी गला खराब, आखिर इतने आपरेशन कर देने के बाद भी रोग ठीक क्यों नहीं होता ? रविन्द्र नाथ टैगोर ने एक स्थान पर लिखा है कि "ऐलोपेथी चिकित्सक ही नहीं वे सर्जन भी जिनके हाथ में रोगी अपने प्राण सोंपकर छुरी चलाने की अनुमति दे देता है, कितने लापरवाह होते हैं वे, छुरी का आश्रय इसलिये नहीं लेते कि उसकी अपेक्षा है, बल्कि इसलिये कि उन्हें इसका शौक है। इससे उन्हें अपने हाथ साफ करने का मौका मिलता है और घर की थैली भी भरती है।

केवल युद्ध में घायल सैनिकों तथा दुर्घटना ग्रस्त रोगियों की आधुनिक चिकित्सा विज्ञान अवश्य सहायता कर सकते हैं, परन्तु प्रत्येक रोग में आपरेशन करके रोगियों को अपाहिज बनाकर छोड़ देना मानवता के विरुद्ध उपचार है। ऐसा कोई रोग नहीं जो प्राकृतिक चिकित्सा से अच्छा न किया जा सके। अतः आपरेशन कराने से पहले प्राकृतिक चिकित्सक से सलाह जरूर कर लेनी चाहिये।

**प्रश्न :-रोगी :—क्या प्राकृतिक चिकित्सा से एक बार रोग ठीक हो जाने पर दुबारा तो रोग नहीं होता, जैसे कि अन्य चिकित्साओं में जब तक दवाई खाते रहो तो रोग ठीक रहता है और दवा छोड़ने पर पुनः रोग बढ़ जाता है।**

उत्तर :- डा० : प्राकृतिक चिकित्सा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि एक बार चिकित्सा करा लेने पर मनुष्य जीवन भर स्वस्थ और सुखी रहने की कला हस्तगत कर लेता हैं। अगर वह प्राकृतिक नियमों के

विरुद्ध चलेगा तो पुनः रोगी हो सकता है। जैसे एक चोर. चोरी करता है और उसकी सजा उसको मिलती है। यदि वह सजा भुगतने के वाद भी चोरी करेगा तो उसको पुनः सजा मिलेगी या नहीं ? इसी प्रकार प्रकृति के नियमों की गल्ती होने पर प्रकृति माता दण्ड के रूप में रोग को जन्म देती है। यानि मनुष्य स्वस्थ होने के बाद भी प्रकृति के अनुकूल चलता है तो मनुष्य हमेशा स्वस्थ रह सकता है और प्रकृति के प्रतिकूल चलने पर ही पुनः बीमार हो सकता है।

**प्रश्न :-क्या प्राकृतिक चिकित्सा करने पर किसी किसी का रोग बढ़ भी सकता है। कुछ लोग कहते हैं हमें यह सूट (माफिक) नहीं करता।**

उत्तर :-डा० : प्राकृतिक चिकित्सा के लिये जो भी रोगी आते हैं, वे सब तरह से निराश और असाध्य रोगी होते हैं। उनके शरीर में कई प्रकार के जहर (रोग) दबे होते हैं जिस प्रकार मकान झाड़ने पर थोड़े समय के लिये धूल उठती है, जो कि थोड़े समय बाद अपने आप साफ हो जाती है। इसी प्रकार हमारे शरीर को साफ करने के वाद प्राकृतिक चिकित्सा में रोग उखड़ते हैं, और उखड़कर सदा के लिये दूर हो जाते हैं। इसलिये एक डाक्टर ने कहा है तुम मुझे बुखार दो मैं तुम्हें स्वास्थ्य दूंगा (Give me a fever, I will cure) अर्थात दूसरे शब्दों में मल पूरित शरीर को मल रहित करने के लिये बुखार तथा तीव्र रोग ही एक मात्र उपाय है। इसको इस प्रकार समझ सकते है कि जिस प्रकार कूड़ा करकट को समाप्त करने के लिये उसमें आग लगा देते हैं जिससे वह कूड़ा भस्म हो जाता है। इसी प्रकार बुखार भी हमारे शरीर में गन्दगी अधिक वड़ जाने पर उसे जलाने का प्राकृतिक प्रबन्ध है, यदि प्रकृति के इस प्रबन्ध में अड़चन न डाली जाये तो ज्वर से शरीर की सारी गन्दगी जल जाती है और शरीर शुद्ध हो जाता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में इसे उभाड़ कहते हैं। पुराने रोगों में उभाड़ अवश्य आते हैं। उभाड़ के द्वारा छोटे छोटे तीव्र रोग उग्र रूप धारण करके प्रकट होते हैं, जैसे तेज खांसी, आंव (पेचिश) आना, वदन में खारिस इत्यादि। ऐसे समय में रोगी घबरा जाता है, और सोचने लगता है कि प्राकृतिक चिकित्सा से रोग अच्छा होने की वजाय बढ़ गया। इस तरह रोगी प्राकृतिक चिकित्सा को बुरा समझकर छोड़ देने की सोचता है और फिर से जिस औषधी–सेवन से लाभ नहीं हुआ था उसी की शरण लेता है। जो ऐसा करते हैं विपत्ति में फंसते हैं, परन्तु जिसने प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त को पूर्णतया समझ लिया है उससे ऐसी भूल कदापि नहीं हो सकती। वे उभाड़ के नियम और तत्व को भली भांति जानते है और प्रत्यक्ष लक्षणों को देखकर यह समझते है कि दबा हुआ रोग शरीर से बाहर निकालकर शरीर की ऊपरी सतह पर आ रहा है और इसी तरह दूर हो रहा है। ऐसे समय में रोगी भाईयों को स्वास्थ्य प्राप्त करने की हिम्मत नहीं हारनी चाहिये। यह उभाड़ की क्रिया थोड़े समय के लिये आती है।

**प्रश्न :- रोगी :- क्या प्राकृतिक चिकित्सा करा लेने के बाद शरीर कुछ (तली वस्तुएं) हजम करने की शक्ति खो देता है ? अक्सर देखा गया है कि जो व्यक्ति आपका प्राकृतिक इलाज करता है अक्सर इन वस्तुओं से दूर रहता है। क्या उसकी हाजमा शक्ति कमजोर हो जाती है ?**

उत्तर :–डा० : एक वार शरीर साफ हो जाने पर हमारी खोई हुई शक्ति जागृत हो जाती है, और जब भी हम कोई गल्त चीज खाते हैं तो हमारी जीवन शक्ति शरीर से फौरन सूचना दे देती है। प्राकृतिक चिकित्सा कराने के बाद शरीर सफेद कपड़े के समान स्वच्छ हो जाता है। जिस

प्रकार सफेद कपड़े में मैल जल्दी मालूम पड़ जाता है परन्तु रंगीन कपड़े में मैल छिप जाता है। इसी प्रकार स्वस्थ और बीमार शरीर में सफेद और रंगीन कपड़े के समान अन्तर है।

जब कोई स्वस्थ व्यक्ति बीड़ी, सिगरेट पीना प्रारम्भ करता है तो स्वस्थ शरीर इस धुएँ को बरदाश्त नहीं करता और उस समय उसे उल्टीयां, चक्कर आने लगते हैं। अर्थात हमारी ज़ीवन शक्ति बीड़ी, सिगरेट को अप्राकृतिक समझकर बहिष्कार करती है। जो लोग अक्सर सिगरेट पीते रहते हैं उन्हें स्वस्थ नहीं कहा जा सकता। सिगरेट पीना वास्तव में कोई कमजोरी है। दूसरे शब्दों में वह अपनी बीमारी जैसे गैस ट्रबल, कब्ज, जुकाम सिगरेट के सहारे दबाये रखता है। वास्तव में प्राकृतिक चिकित्सा करने के बाद हमारा शरीर अधिक चेतनाशील (सेन्सटिव) हो जाता है और जब भी हम प्राकृतिक नियमों को तोड़ते हैं तो प्रकृति हमें सचेत करती है। जिस प्रकार हमारे घर में, घर का पहरेदार, वफादार कुत्ता चोर के आने पर हमको जगाना चाहता है ताकि हम अपनी रक्षा चोर से कर सकें उसी प्रकार हमारा स्वस्थ शरीर हमें गल्त चीजों के खा लेने पर कष्ट के रूप में सजा दे सकता है।

परन्तु जब हम बार बार अप्राकृतिक वस्तुओं का व्यवहार करते हैं तो हमारी जीवन शक्ति कमजोर हो जाती है। जिस प्रकार एक मुर्दा शरीर पर कोई भी क्रिया नहीं होती है उसी प्रकार कमजोर जीवन शक्ति वाले (बीमार) शरीर पर भी कोई क्रिया नहीं होती। वे चाय, काफी, मांस आदि के रूप में जहर भी खाते रहते हैं और उनका शरीर सब कुछ सहन करता जाता है, और बाद में जाकर कई रोग उन्हें घेर लेते हैं। जैसे ब्लड प्रेशर, मधूमेह. कैन्सर, लकवा आदि। अतः जिन लोगों को गल्त चीज खा लेने पर कोई क्रिया होती है तो उन्हें अपने आप को स्वस्थ नहीं समझना चाहिए।

**प्रश्न : रोगी : प्राकृतिक चिकित्सा आर्थिक दृष्टि से महंगी है ? जबकि प्राकृतिक चिकित्सा के प्रेमी लोग इसे बहुत सस्ती बताते हैं ?**

उत्तर :- डा० : प्राकृतिक चिकित्सा आर्थिक दृष्टि से अन्य चिकित्सा पद्धति की अपेक्षा बहुत सस्ती है। अन्य चिकित्सा पद्धतियों में सरकारी सहयोग के कारण चिकित्सा का खर्च प्रत्यक्ष (डारेक्ट) रूप से जनता को नहीं देना पड़ता। इसलिए लोग समझते हैं कि वह सस्ती है परन्तु सरकारी हस्पतालों में रोगी के ऊपर कम से कम पन्द्रह रुपये प्रतिदिन खर्च होता है। वह सारा पैसा जनता का होता है, और जनता से ही अन्य तरह से लिया जाता है, लेकिन इलाज कराते समय रोगी को बहुत कम देना पड़ता है। इसलिये लोग आधुनिक चिकित्साओं को सस्ती समझ लेते हैं जबकि आधुनिक चिकित्सा के नाम पर हमारे देश के करोड़ों रुपये खर्च होते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा में यदि किसी के पास खाने के लिये भोजन भी न हो तो उपवास के द्वारा बगैर कुछ खर्च किये वे लाभ उठा सकते हैं। प्रातः ताजी हवा में घूमने में, आसन करने में, कुछ भी खर्च नहीं होता है। प्राकृतिक चिकित्सा की सुविधा सरकार की तरफ से न होने के कारण बहुत सी संस्थाओं को साधन जुटाने के लिये लाभ उठाने वाले रोगियों से कुछ लेना पडता है। दूसरी महत्व-पूर्ण बात यह है कि एक बार इस चिकित्सा पर खर्च करने के बाद रोगी जीवन भर औषधियों के खर्च से बच सकता है, तथा मनुष्य जीवन भर स्वस्थ और सुखी रहने की कला हस्तगत कर लेता है, और दूसरों को भी स्वस्थ रहने की कला का ज्ञान दे सकता है। मनुष्य रोगी बनकर प्राकृतिक चिकित्सालय में आता है और योगी बनकर जाता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में फल और सब्जियों के अधिक उपयोग पर जोर दिया जाता है। जो लोग जानबूझकर महंगे फल खाते हैं, ऐसे लोगों को प्राकृतिक चिकित्सा को दोष नहीं देना चाहिये। हर मौसम में सस्ते फल व सब्जियाँ अवश्य मिलती हैं जिनके सेवन से सस्ता आहार लेते हुये भी स्वास्थ्य प्राप्त किया जाता है।

**प्रश्न : रोगी :-कुछ लोग कहते हैं कि प्राकृतिक चिकित्सा स्टीम-बाथ (भाप स्नान) के तुरन्त बाद ठण्डे पानी से नहाने की सलाह देते हैं, जबकि पुराने लोग पसीना आने पर एकदम नहाने के लिये मना करते हैं ? क्या इस तरह गरम के बाद एकदम ठन्डे पानी से नहाने से गरम सर्द तो नहीं होता ?**

उत्तर :-डा० :—विज्ञान का नियम है कि जब हम किसी वस्तु को गरम करते हैं तो वह फैल जाती है, और ठण्डा करने पर सिकुड़ जाती है। इसी प्रकार स्टीम-बाथ-द्वारा शरीर में गर्मी प्राप्त होती है और हमारे शरीर की मासपेशियां फैल जाती है, तथा पसीने के रूप में शरीर का जहर बाहर निकल जाता है। तथा ठण्डे पानी से नहाने से मांसपेशियां सुकुड़ जाती है। मांसपेशियों के सिकुड़ने फैलने से उनमें ब्लड का सरकूलेशन बढ़ता है और अधिक क्रियाशील हो जाती है और अपना कार्य सक्षम रूप से करने में सक्षम हो जाती है। जिस प्रकार लोहें को गरम करने पर वह एकदम लाल हो जाता है, ओर लाल होने पर उसे एकदम ठण्डे पानी में डाल दिया जाता है। ऐसा माना जाता है कि इस तरह करने से लोहा मजबूत हो जाता है। कुछ लोगों को प्रारम्भ में इस

तरह नहाने से गरम शरद हो सकता है । प्राकृतिक चिकित्सा में ऐसा माना जाता है कि जिनके शरीर में अधिक विकार (विजातीय द्रव्य) जमा रहता है उनको ऐसा होना आवश्यक है, और यह शुभ माना जाता है कि प्रकृति ने शरीर से विकार निकालने का कार्य प्रारम्भ कर दिया है । प्राकृतिक चिकित्सा में इसे उभाड़ या हीलिंग क्राईसिस कहते है । यह उभाड़ थोड़े समय के लिये ही होता है ।

प्राकृतिक चिकित्सा प्रारम्भ करने पर रोगी के शरीर में गन्दगी साफ होनी शुरु हो जाती है और जीवन शक्ति भी प्रबल होने लगती है । पुराने रोग उखड़कर पहले नये रोग का रुप धारण करते है जैसे बुखार, दस्त, उल्टी, खांसी अथवा फोड़ेफुसियों द्वारा विजातीय द्रव्य तेजी से साफ होना प्रारम्भ हो जाता है । ऐसी अवस्था में धैर्य और सावधानी रखने की आवश्यकता होती है ।

## प्रश्न : रोगी : प्राकृतिक चिकित्सा इतनी प्रभावशाली होने पर भी लोग इसे अपनाते क्यों नहीं ?

उत्तर : डा० :—प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली अपने अद्भुत गुणों के कारण काफी लोक प्रिय होती जा रही है । इसका पुर्नजन्म लगभग 150 वर्ष पूर्व जर्मनी में हुआ था । लगभग 60 वर्ष पूर्व इसका इस देश में अधिक प्रचार नहीं था । कहीं–कहीं बिखरे हुये थोड़े से लोग इसे जानते थे । जिन्हे लोग पागल समझा करते थे । परन्तु अब इसकी उपयोगिता सर्वत्र मानी जाने लगी है । शिक्षित वर्ग में इसके अनुयायिओं की संख्या काफी है परन्तु फिर भी आम लोग इस के नजदीक नहीं आये हैं ।

प्राकृतिक चिकित्सा में बिना किसी औषधियों के उपयोग के इलाज किया जाता है। इस लिये बहुत से लोग यह नहीं समझ पाते हैं कि बिना दवाई के इलाज कैसे ? यह सच भी हैं कि संसार में हजारों वर्षों से दवाईयों का उपयोग होता आया है तो कोई सामान्य व्यक्ति बिना दवाई के इलाज कैसे समझ सकता है ?

दूसरी बात यह है कि प्राकृतिक चिकित्सा इतनी सरल, सहज चिकित्सा प्रणाली है कि इसकी सरलता पर लोग विश्वास ही नहीं करते क्यों कि उनका इलाज बड़े–बड़े हस्पतालों में भी ठीक नहीं होता तो अपने आप को असाध्य रोगी समझ लेते हैं । वह सोचते हैं कि इतने सरल उपचार से कैसे ठीक हो सकते हैं । आज कल साधारण जनता विज्ञान उसको समझती है जो उसकी सहज बुद्धि के बाहर की बात हो अर्थात् उसकी समझ से विज्ञान वह चीज है जो बड़ी जटिल, रहस्यमय एवं सर्व साधारण के मस्तिष्क में न घुसने वाली बात हो । नतीजा यह होता है कि लोग प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली को उतनी श्रद्धा–भक्ति से नहीं अपना पाते जितनी अन्य चिकित्सा प्रणालियों को।

तीसरा कारण यह हैं कि प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में जब रोगी सब तरफ से निराश हो जाता है और मरने के करीब होता है तो उस समय प्रकृति की शरण में उसे आजमाने के लिये आते हैं । मगर उस समय देर हो चुकी होती है । फिर भी ऐसे रोगियों में 90% प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा ठीक हो जाते हैं और 10% प्रतिशत रोगी जो अपनी गलती से ठीक नहीं होते उसका कंलक प्राकृतिक चिकित्सा पर थोपा जाता हैं, और उसको व्यर्थ में बदनाम किया जाता है ।

चौथा कारण यह होता है कि चिकित्सा काल में रोग उखडते हैं क्योंकि जो भी रोगी आते है वह सब तरह से निराश असाध्य रोगी होते हैं

उनके शरीर में कई प्रकार के जहर (रोग) दवे होते हैं । जिस प्रकार मकान झाड़ने पर थोड़े समय के लिये धूल उड़ती है, तो रोगी सोचने लगता हैं कि प्राकृतिक चिकित्सा रोग अच्छा होने की बजाय बढ़ गया और इस तरह प्राकृतिक चिकित्सा को बुरा समझकर छोड़ देने की सोचता है और फिर से जिस औषधि सेवन से लाभ नहीं हुआ था, उसी की शरण लेता है । जो ऐसा करते हैं, विपत्ति में फंसते हैं परन्तु जिसने प्राकृतिक चिकित्सा को समझ लिया है उससे ऐसी भूल कदापि नहीं होती । प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में स्वयं रोगी का अपना अधिक उत्तरदयित्व होता है उसे नहीं भूलना चाहिये कि रोग के उभार का मतलब रोग को जड़ से उखाड़ना है । परन्तु कुछ रोगी बहुत समझाने के वाद भी नहीं समझते और धैर्य खोकर स्वयं तो हानि उठाते हैं साथ ही प्राकृतिक चिकित्सा का नाम बदनाम करते हैं ।

आजकल कथित सम्य समाज में कृत्रिमता का जाल इस तरह छाया हुआ है कि प्राकृतिक चिकित्सा के व्यवहारिक सिद्धान्तों का प्रचार करके उन्हें लागू करना कठिन होता जा रहा है । हमारे वर्तमान समय ने कृत्रिम रहन सहन ने हमें स्वाभाविक जीवन बिताने से दूर कर दिया है और हमारा आत्म बल इतना कम हो गया है कि रोग होने पर हम एक दिन भी खाना छोड़कर उपवास की बात सोचकर भयभीत हो जाते हैं, हम डाक्टर की जहरीली गोलियां, इन्जेक्शनो का उपयोग करके अपने स्वास्थ्य को दिनों दिन चोपट करते रहते हैं । हमारी यह दयनीय दशा प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार में बाधक है ।

प्राकृतिक चिकित्सा का व्यापक प्रचार न होने का एक कारण यह भी है कि इस चिकित्सा पद्धति का विज्ञानिक प्रमाणित न होना । वहुत से प्राकृतिक चिकित्सकों ने ऐसे असाध्य रोगीयों को लाभ पहुंचाया है जिन रोगियों को अन्य पेथियों ने जवाब दे दिया था । एक चिकित्सक

ने कैन्सर के रोगी को दो माह तक अंगूर और किसमिश के भोजन पर रखकर वहुत लाभ पहुंचाया, परन्तु जव उस चिकित्सक ने उक्त वात अन्य पेथियों के चिकित्सको को वताई तो उन्होंने कहा हम यह नही मान सकते। जिसको आपने ठीक किया, हो सकता है उसे कैन्सर न हो। दमा (श्वास) के वारे में कहा जाता है कि "दमा दम के साथ ही जाता है।" परन्तु प्राकृतिक चिकित्सा ने हजारों ऐसे रोगियों को लाभ पहुंचाया है, जव तक प्रयोगों और वैज्ञानिक अनुसन्धानों द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा की वैज्ञानिकता नहीं प्रमाणित हो जाती, तव तक इस चिकित्सा पद्धति का सिक्का जमना कठिन है।

प्राकृतिक चिकित्सा का अधिक प्रचार न होने का एक कारण यह भी है कि अन्य चिकित्सा पद्धतियो की भांति इसे सरकार का संरक्षण प्राप्त नहीं है। शासन की तरफ से प्राकृतिक चिकित्सा का सहारा लेने वाले कर्मचारियों को कोई सुविधा नहीं है। विना सरकार के प्राकृतिक चिकित्सा की उन्नति की आशा करना दुराशा मात्र है। महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्य में प्राकृतिक चिकित्सा भी शामिल है। फिर भी सरकार इसके प्रति उदासीन है।

कुछ धनवान लोग धर्मार्थ औषधालय खुलवाकर लोगों को समय समय पर बीमार पड़ने और औषधी खाने की प्रोत्साहित करते है। डा० होप का कहना है कि "पाप और बीमारी में कोई अन्तर नहीं है।" सच्चा चिकित्सक रोगी को दवा देकर छुटकारा नहीं पा सकता, वरन उसे रोगी की आन्तरिक विकृतियो को देखना चाहिये। "धनवान लोग कीर्ति के लालच में मुफ्त औषधियां वांटने की गलत सेवा करते हैं।" स्वास्थ्य के नियमों में व प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार की मदद से रोगों को रोका जा सकता है।

बहुत से रोगियो को नशीली वस्तुये तथा कुछ विशेष औषधियां खाने की आदत होती है। चिकित्सा अवधि में भोजन सुधार व संयम से रहने की आवश्यकता होती है, परन्तु अपनी आदत की पराधीनता में चाय, पान, सुपारी, बीड़ी, सिगरेट, तम्बाखू, नसवार, अफीम, शराब, मांस, मछली, मिठाईयां, आदि हानिकारक चीजे ख... की आदत होती है। ऐसे रोगियों को प्राकृतिक चिकित्सा में स्वास्थ्य लाभ लेना मुश्किल लगता है। अतः वह अपनी भूल अस्वीकार करके प्राकृतिक चिकित्सा की आलोचना करते हैं।

प्रत्येक परिवार में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार तथा शिक्षा का अभाव होने से तथा कई पीढ़ियों से औषधियों की गुलामी में फंसे रहने तथा खाने-पीने के कई बेकार भ्रमों के कारण घर के सदस्य प्राकृतिक चिकित्सा के नियमों को अपनाने में सहयोग करने की बजाय अड़चने डालते हैं। भोजन सुधार, संयम व उपवास का तो बहुत अधिक विरोध करते हैं। ऐसी परिस्थति में प्राकृतिक चिकित्सा प्रेमी के लिये भी अपने घर पर भी प्राकृतिक चिकित्सा के नियमों का पालन करना मुश्किल होता है।

**प्रश्न : रोगी :– प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार से देश का करोड़ों रुपया जो दवाई पर खर्च होता है वो बच सकता हैं। हमारी सरकार इसे मायन्ता क्यों नहीं देती ?**

उत्तर : डा० :–सभी सरकारे जनता द्वारा नहीं अपितु देश के पूंजी पतियों, व्यापारी वर्ग द्वारा अधिकार पूर्ण स्वार्थ द्वारा संचालित होती है, जो सरकारों को प्रतिवर्ष मोटी मोटी रकमें कर के रुप में देती रहती है। ये सरकारे आंसू पोंछने भर को, कभी कभी थोड़ी बहुत हिमायत हमारी भी कर देती है। प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी कुछ बातों की मान्यताये भी यदा कदा वे दे देती हैं। मगर यह संघर्ष वास्तव में

प्राकृतिक चिकित्सा और सरकारों का नहीं वल्कि प्राकृतिक चिकित्सा और औषिधी चिकित्सा के समर्थकों का है।

सरकारी कर्मचारियों के लिए चिकित्सा व्यय की सुविधा एक ऐसी 'कामधेनु' बन गई है, जिस से सरकारी कर्मचारी, डाक्टर और कैमिस्ट जी भर कर दूध दोहते हैं।

हमारे देश में सरकारी कर्मचारियों को चिकित्सा व्यय के नाम पर जितना धन लुटाया जा रहा है, उतने धन से हस्पताल में सभी रोगियों का हर प्रकार की दवाई उपलब्ध कराई जा सकती है। इस चिकित्सा व्यवस्था से समाज और राष्ट्र, खोखले हो रहे है और किसी को इस ओर ध्यान देने की फुरसत क्यों हो ? आखिर ध्यान देने वाले भी तो उसी नांव में सवार है जिसपर चढ़कर सरकार के खाते से बिना बीमार पड़े दो नम्बर की कमाई का प्रसाद मिलता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में बिना दवाईयों के इलाज किया जाता हैं और प्राकृतिक चिकित्सा औषधियों को प्रकृति के विरूद्ध समझती है। जिससे औषधि चिकित्सकों का प्राकृतिक चिकित्सकों के प्रति विरोध पूर्ण दृष्टीकोण हैं आज की सरकारे औषिधी चिकित्सकों विशेषकर ऐलोपेथिक डाक्टरो का बहुमत है। ऐसी हालत में प्राकृतिक चिकित्सा कैसे पनप सकती है और भारत सरकार इसे कैसे मान्यता दे सकती है।

हमारे देश में जो कुछ हुआ है वह मात्र महात्मा गांधी के प्रभाव से ही। आज की सरकार में जो महात्मा गांधी के करीब रहने वाले व्यक्ति केवल उन्हीं के जोर से थोड़ा बहुत संरक्षण मिल जाता है।

**प्रश्न : रोगी :—चिकित्सकों के विचारो में मतभेद क्यों होते है, देखा गया कि एक चिकित्सक दूसरी चिकित्सा की टिका टिप्पड़ी करते है, जिससे रोगी भ्रमक स्थिति में पहुंच जाता है।**

उत्तर : डा० :— प्राचीन समय में देश में प्राकृतिक चिकित्सा के शिक्षण की कोई संस्था नहीं थी, कोई माप दण्ड नहीं था। और प्राकृतिक चिकित्सा के जानकार स्वयंभु थे। और चिकित्सक स्वयं अपने अध्ययन और अनुभव से चिकित्सक बने इस लिये प्राकृतिक चिकित्सक के विचारो में अन्तर होना स्वाभविक है। ऐसी स्थिति में किसी एक को गलत दुसरे को सही नही समझना चाहिये। हर एक अनुभव के आधार पर सही हो सकता है।

चिकित्सको में समानता लाने के लिये वैज्ञानिक गोष्ठियों का आयोजन करना चाहिये। अखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद ने इस ओर कुछ ध्यान दिया है परन्तु परिषद की वार्षिक बैठक एक साधारण सम्मेलन के सिवा कुछ नहीं है इससे ज्ञान के क्षेत्र में कण भी वृद्धि नहीं होती। ऐसी बैठकों में वैज्ञानिक मामलो को तकनी की—वहस मुकाबले दुसरा स्थान मिलना चाहिये।

अक्सर देखा गया है कि एक रोगी ऐलोपेथिक इलाज से निराश होकर जब आयुवेदिक या होमयोपेथिक अथवा प्राकृतिक चिकित्सक के पास पहुंचता है तो उसका इलाज प्रारम्भ करने से पहले डाक्टरी इलाज

पर टिका टिप्पनी कर अपने आप को काबिल समझाने की कोशिश करते है। यह तरीका किसी भी डाक्टर या वैद्य या सत्व चिकित्सक के लिये ठीक नही है रोगी को इन बातों से कुछ लेना देना नहीं होता वह तो भ्रमक स्थिति में पहुंच जाता है, वह तो एक जगह से दूसरी जगह अपना रोग दूर करवाने जाता है चिकित्सा विज्ञान के आपसी मतभेद से उसे क्या काम ? इस प्रकार की ग्रहित और दूषित मनोवृति को निश्चय ही स्थान नहीं मिलना चाहिये।

अपनी चीज को खरा साबित करने के लिये हर मुमकिन कोशिश हर कोई कर सकता है। पर ऐसा करते हुये दुसरे की चीज को खोटा साबित करने के लिये अपनी शक्ति को व्यर्थ करना बुद्धिमानी नही है।

संस्था कोई भी क्यों न हो वह सुसंगठित होकर ही ऊपर उठ सकती है। एकता और संगठन में बड़ा बल होता है, यदि हम एक होकर एक दिल होकर अपना संगठन करले तो प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार

अपनी अपनी डफली, अपना–अपना राग

में चार चांद लग सकते है, उस वक्त हम सरकार का आसन डुला सकते है। और उससे प्राकृतिक चिकित्सा को सरकारी मान्यता भी मिल सकती है। इसके विपरीत यदि हम एक दुसरे की टिका टिप्पनी करेगें तो अपनी अपनी डफली ओर अपना अपना राग अलापेगे तो प्राकृतिक चिकित्सा की दिशा में कुछ भी नहीं कर सकेगें।